(मासिक)

ज्ञानामृत

वर्ष 55, अंक 2, अगस्त, 2019
मूल्य 8.50 रुपये, वार्षिक शुल्क 100 रुपये

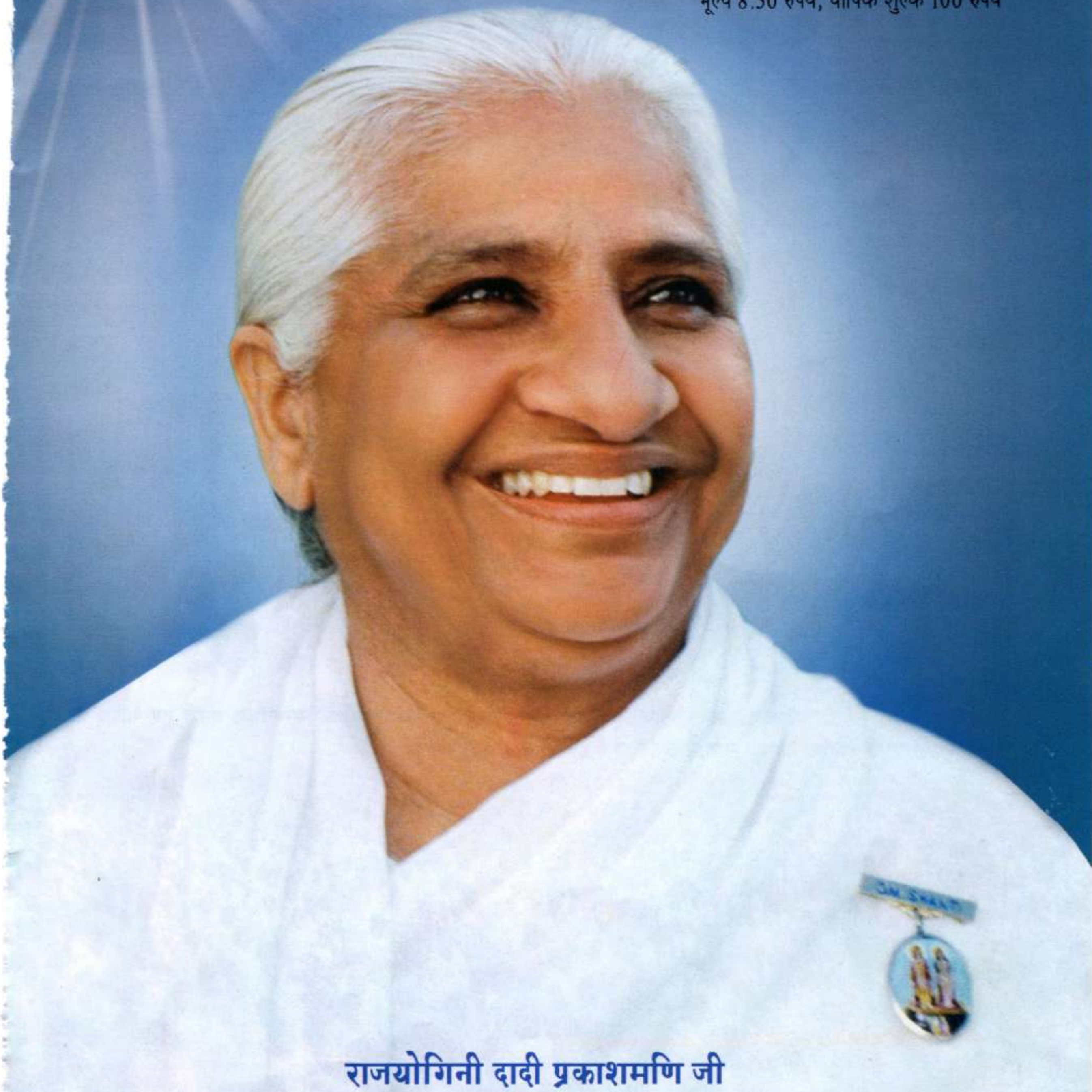

राजयोगिनी दादी प्रकाशमणि जी
बारहवीं पुण्यतिथि (25 अगस्त, 2019)

1.दिल्ली- लाल किला मैदान में, अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस पर आयोजित कार्यक्रम को सम्बोधित करते हुए भारत के उप-राष्ट्रपति भ्राता वेंकैय्या नायडू। सभा में उपस्थित हैं हजारों योगी भाई-बहनें।

संजय की कलम से –

रक्षा-बन्धन
आज की परिस्थिति में

भारत में जितने भी त्योहार मनाए जाते हैं उन सबमें से रक्षा-बन्धन अधिक सात्विक मालूम होता है। परन्तु जिस अर्थ को लेकर यह त्योहार शुरू हुआ था, आज उसमें काफ़ी अन्तर आ गया है। आज जो रक्षा-बन्धन का त्योहार मनाया जाता है उसमें प्राय: बहनें, भाई को राखी बाँधती हैं। लोग इसका यह अभिप्राय समझते हैं कि इस रस्म के बाद भाई अपनी बहन की रक्षा करने के लिए बाध्य हो जाता है। परन्तु अब हम इस बात पर विचार करेंगे कि क्या रक्षा-बन्धन का आदि स्वरूप और वास्तविक अभिप्राय यही था और क्या रक्षा-बन्धन का यह रहस्य मानना विवेक-सम्मत है?

क्या रक्षा-बन्धन शारीरिक रक्षा के लिए है?

सोचने की बात है कि यदि शारीरिक रक्षा ही रक्षा-बन्धन का अभिप्राय होता तो कन्याएं अपने छोटे-छोटे, अबोध भाइयों को राखी क्यों बाँधतीं? आज हम देखते हैं कि चौदह वर्ष की कन्या अपने तीन वर्ष की आयु वाले भाई को भी राखी बाँधती है; क्या तीन वर्षीय बालक रक्षा करने में समर्थ है? पुनश्च, चार वर्ष की आयु वाली छोटी बहन अपने दो वर्षीय भाई को भी राखी बाँधती है यद्यपि दोनों को इस रस्म के रहस्य का पता ही नहीं होता। न तो वे अभी रक्षा करने में समर्थ होते हैं, न वे इस प्रतिज्ञा को समझते हैं।

फिर, यह भी प्रश्न उठता है कि यदि शारीरिक रक्षा ही अभिप्राय होता तो कन्या भाई को रक्षा-बन्धन की बजाय अपने पिता को, चाचे को या मामे को ही राखी क्यों न बाँधती? भाई में ऐसी क्या विशेषता है जो कि पिता में, मामे में या चाचे में नहीं है?

इसके अतिरिक्त, यह भी विचारणीय है कि पूर्व काल में शैतान लोगों अथवा अत्याचारियों से नागरिकों की रक्षा करना तो राजा का कर्त्तव्य हुआ करता था। उस काल में तो लोगों के जान-माल की रक्षा के लिए राज्य की ओर से ठीक व्यवस्था होती थी, राजा पूरा न्याय करता था और अपराधियों तथा अत्याचारियों को कड़ा दण्ड देता था जिसके परिणामस्वरूप उन दिनों अपराध बहुत कम होते थे, तब तो फिर मानना पड़ेगा कि 'रक्षा-बन्धन' का त्योहार भाई द्वारा बहन की शारीरिक रक्षा के लिए नहीं था बल्कि इसके पीछे कोई और रहस्य था।

बहन और भाई में तो स्नेह स्वाभाविक है, तब फिर भाई द्वारा बहन की रक्षा में सन्देह क्यों? फिर कन्या-माता की रक्षा तो केवल सगे भाई को ही नहीं बल्कि हरेक

शेष भाग पृष्ठ 14 पर

अमृत-सूची

संजय की कलम से	3
नाराजगी और ताजगी (सम्पादकीय)	4
दिव्यगुणों की मूर्ति अनोखी (कविता)	7
उन्हें गुस्सा नहीं आता	8
नम्रता की मूर्त - राजयोगिनी दादी प्रकाशमणि जी	9
पत्र सम्पादक के नाम	10
सद्गुण ही सम्पदा हैं	11
त्यौहारों की मौलिकता एवं रक्षाबंधन का मर्म	16
आज है रक्षाबन्धन (कविता)	17
प्रकाशमणि दादी जी की प्रकाशमय बातें	18
निंदक या शिक्षक ?	19
श्री कृष्ण जन्माष्टमी (कविता)	22
सुख-शान्ति का आधार सहज राजयोग	23
श्रद्धांजलि	26
दादी की दृष्टि, बापदादा की दृष्टि	
महसूस हुई (अनुभव)	27
सचित्र सेवा-समाचार	28
यशदायिनी दादी प्रकाशमणि	30
बँधा ले आजा राखी तू (कविता)	31
सचित्र सेवा-समाचार	32
इसी वजह से (कहानी)	34

सम्पादकीय

नाराजगी और ताजगी

इस कलिकाल में हम देखते हैं कि हरेक व्यक्ति किसी एक-न-एक से जरूर नाराज अथवा असन्तुष्ट है। शायद ही कोई व्यक्ति ऐसा मिलेगा जो सबसे पूर्णतया सन्तुष्ट हो और जिससे अन्य सभी भी सन्तुष्ट हों। इस बात को देखकर किसी लेखक ने यह कह दिया कि संसार में आज तक कोई ऐसा मनुष्य पैदा ही नहीं हुआ जो सारी दुनिया को सन्तुष्ट कर सका हो।

अब क्या किया जाए! क्या लोगों को असन्तुष्ट ही रहने दिया जाए और उनकी दशा को उन्हीं पर छोड़ दिया जाए या कोई ऐसा उपाय है जिससे कि अधिकाधिक लोगों को सन्तुष्ट किया जा सकता है? फिर अपनी असन्तुष्टता का क्या इलाज है? हमारी अपनी नाराजगी कैसे दूर हो और हम में ताजगी कैसे आए?

योगी के लिए सन्तोष और सन्तुष्टता महत्वपूर्ण

योगी का ध्यान अपने चित्त और वृत्तियों पर होना स्वाभाविक है। हरेक योग-शास्त्र में संतोष और सन्तुष्टता को विशेष स्थान दिया गया है और उसकी विशेष व्याख्या की गई है। यदि हम योग-स्थिति का विश्लेषण करें तो इस परिणाम पर पहुँचेंगे कि योग और सन्तुष्टता सहगामी हैं। संसार की स्थिति से असन्तुष्टता, प्रारंभ में कई धर्म-प्रेमी लोगों को योग मार्ग अपनाने के लिए प्रेरित करती है परन्तु जब मनुष्य योगयुक्त हो जाता है तब वह असन्तुष्टता नामक चित्त-वृत्ति से अवश्य ही ऊँचा उठा हुआ होता है।

नाराजगी और असन्तुष्टता में अन्तर

यहाँ हम नाराजगी और असन्तुष्टता में अन्तर को स्पष्ट कर देना चाहते हैं। हमारे विचार में असन्तुष्टता, नाराजगी की जननी है परन्तु असन्तुष्टता से नाराजगी अधिक उग्र और क्लेशकारी है। यह एक मानसिक ताप है। जैसे किसी व्यक्ति का तापमान सदा 99 प्रतिशत रहता हो, वैसे ही नाराजगी वाले मनुष्य का मन भी थोड़ा-बहुत तपा हुआ ही रहता है गोया यह एक मानसिक ज्वर है, एक प्रकार का तपेदिक रोग है। यदि हमारे साथ किसी का व्यवहार मर्यादापूर्ण न हो अथवा हमारे साथ कोई कार्य करने वाला ठीक प्रकार से कार्य न करता हो तो इस परिस्थिति में असन्तुष्टता का उद्रेक होने की सम्भावना तो होती है परन्तु, उस व्यक्ति से नाराज हो जाना स्वयं अपनी ही कमजोरी के कारण होता है। असन्तुष्टता को जागृत करने में तो दूसरा व्यक्ति भी भागीदार होता है क्योंकि उसी की रीति-नीति और उसी की स्थिति-कृति अथवा उसी की बातचीत मर्यादा का उल्लंघन करने वाली होती है परन्तु नाराजगी का होना या न होना स्वयं हम पर अर्थात् हमारे स्वभाव पर निर्भर करता है।

नाराजगी और असन्तुष्टता का कारण और निवारण

अब प्रश्न यह है कि नाराजगी अथवा असन्तुष्टता का इलाज क्या है? हमारा यह विचार है कि किसी मनुष्य में मुख्य रूप से दो कारणों से ही असन्तुष्टता होती है। एक कारण तो प्राय: यह हुआ करता है कि आप जिस व्यक्ति से सहयोग, सहायता, सहानुभूति, सहकारिता, स्नेह और सम्मान की आशा करते हैं, वह उस आशा के

अनुसार पूरा नहीं उतरता और दूसरा कारण यह हुआ करता है कि आप जिस व्यक्ति से सभ्य-व्यवहार, मर्यादा, शालीनता, अनुशासन, सरलता और सच्चरित्रता की आशा करते हैं, आपकी वह आशा उससे पूरी नहीं होती। इन कारणों से हमारे मन में असन्तुष्टता और उससे उद्‌भूत होने वाली नाराजगी तभी पैदा होती है जब हम अग्रलिखित तीन बातों को समय पर अपने मन में स्थिर नहीं कर पाते –

1.यह कि हरेक मनुष्य स्वयं कई उलझनों में उलझा हुआ है, चिन्ताओं में डूबा हुआ है, परिस्थितियों से पीड़ित है, कमियों और कमजोरियों से जकड़ा हुआ है। उसके अपने विचार अस्थिर हैं और तन से, मन से, धन से तथा बुद्धि से उसके सामर्थ्य की सीमा है। जब हम उसकी इन परिस्थितियों की उपेक्षा करके उससे आशा करते हैं तो मानो जान-बूझकर अपने को असन्तुष्टता का शिकार बनाते हैं।

2.हम यह भूल जाते हैं कि इस समय सभी मनुष्यों की तमोप्रधान, मर्यादाविहीन, माया-अधीन, मानसिक चंचलता, अस्थिरता तथा संस्कारों की अशुद्धता की अवस्था है। जो इससे ऊँचे उठ चुके हैं वे भी अभी सम्पूर्ण नहीं बने हैं। यदि वर्तमान समाज तथा उसके व्यक्तियों की दशा का ज्ञान हमारी बुद्धि में स्थिर रहे तो हम नाराजगी से बचे रह सकते हैं।

3.यदि हमें यह बात विस्मृत न हो कि हमारा हरेक व्यक्ति से कर्म-फल भी है और हमारा व्यक्तिगत कर्म-फल भी हमारे साथ है और कि हरेक मनुष्य शुद्ध रूप से, अशुद्ध रूप से तथा शुद्ध एवं अशुद्ध मिश्रित रूप से किसी न किसी अंश में स्वार्थी भी है तो फिर हम नाराजगी के उग्र रूप से स्वयं को बचाये रख सकते हैं।

हम एक-दो उदाहरणों द्वारा इस बात को और अधिक स्पष्ट करते हैं –

एक उदाहरण

मान लीजिए, किसी सेवाकेन्द्र की कोई शिक्षिका, किसी ज्ञानवान भाई को कहती है, 'आज सायं शिवरात्रि से सम्बन्धित कार्यक्रम है। उसके लिए व्यवस्था करनी है। आज आप सायं 5.30 बजे अवश्य अमुक हॉल में पहुँच जाना।' वह भाई कहता है, 'बहनजी, आज तो मैं जल्दी नहीं आ सकता। हमारे दफ्तर में कार्य बहुत है। मुझे जल्दी छुट्टी मिलेगी ही नहीं। अत: 6.00 या 6.30 बजे तक पहुँच सकता हूँ।' इस पर यदि वह बहन उससे असन्तुष्ट अथवा रुष्ट हो जाती है और कहती है कि 'वर्षभर में एक दिन ही तो शिवरात्रि का त्योहार हम मनाते हैं। आप तब भी थोड़ा जल्दी छुट्टी नहीं कर सकते तो बाकी फिर आप क्या सेवा कर सकते हो अथवा आपका निश्चय क्या हुआ?' बहन को असन्तुष्टता से व्यवहार करते देख वह भाई भी नाराज हो जाता है। वह कहता है कि 'बहन जी, मेरी परिस्थिति को तो आप मापती नहीं हैं, यों ही रुष्ट हो रही हैं, यह कोई ठीक थोड़े ही है।'

इस तरह की बात तभी होती है जब दोनों एक-दूसरे की परिस्थिति को ध्यान में नहीं रखते। जब उस व्यक्ति को दफ्तर से छुट्टी ही नहीं मिल सकती तो उससे असन्तुष्ट होने का कारण ही नहीं है। हाँ, यदि हमें शत-प्रतिशत सही मालूम है कि यह व्यक्ति छुट्टी ले सकता है और यों ही टरका रहा है तब हम मान सकते हैं कि वह सहयोग नहीं देना चाहता। परन्तु, एक-दूसरे की आवश्यकता एवं परिस्थिति को ठीक प्रकार न मापने के कारण परस्पर असन्तुष्टता होती है।

दूसरा उदाहरण

मान लीजिए, एक महिला को अपने भाई से सहायता चाहिए परन्तु उतनी सहायता न मिलने पर वह असन्तुष्ट होकर कहती है, 'अब इस भाई का मुझ से कुछ भी स्नेह नहीं रहा। जबसे इसने विवाह किया है, तब से यह बदल गया है। यह अपनी जोरू का गुलाम बन गया है।' बहन का ऐसा दृष्टिकोण देखकर भाई भी बहन से नाराज हो जाता है। इसका कारण क्या है? यही कि बहन यह नहीं देखती कि भाई की परिस्थिति बदल गई है और

दूसरों से ज्यादा खुद की इच्छायें परीक्षायें लेती हैं, इन्हें पार कर लेने वाले के लिये दूसरी परीक्षायें बहुत छोटी हो जाती हैं

उसका स्नेह-भाजन भी बदल गया है। स्वाभाविक बात है कि पहले बहन छोटी थी और भाई भी अकेला था। अब विवाहित हो जाने पर भाई अपनी पत्नी की ओर भी जिम्मेदारी महसूस करता है और सोचता है कि बहन की जिम्मेदारी कुछ तो उसके पति तथा ससुराल वालों पर भी है ही। अत: सीमित सामर्थ्य होने के कारण अब वह बहन के कार्यों पर उतना धन और समय खर्च नहीं कर सकता जितना पहले किया करता था। यह बात बहन की समझ में आनी चाहिए। यदि इस पर उसका ध्यान रहता तो वह नाराजगी से बच जाती।

अधिकाधिक लोगों को सन्तुष्ट कैसे करें?

अभी हमारा यह प्रश्न रहा हुआ है कि हम अधिकाधिक लोगों को सन्तुष्ट कैसे करें? इस बारे में हमारा विचार है कि नम्रता, मधुरता, स्नेह, सहयोग, सेवा और त्याग रूपी गुणों की धारणा ही अधिकाधिक लोगों को सन्तुष्ट करने की साधक है। हमारी अपनी असन्तुष्टता लोगों से स्नेह, सहयोग इत्यादि न मिलने के कारण होती है, वैसे ही लोग भी हमसे इसलिए असन्तुष्ट होते हैं कि हम स्नेह, सहयोग, सम्मान इत्यादि से युक्त होकर उनसे व्यवहार नहीं करते।

क्या हम असन्तुष्टता को व्यक्त करें?

अन्त में, हम इस बात पर भी विचार कर लें कि क्या हमें अपनी असन्तुष्टता अथवा नाराजगी अभिव्यक्त करनी चाहिए या चुप ही साध लेनी चाहिए? कुछ लोग कहेंगे कि नाराजगी अथवा फीलिंग एक प्रकार का फ्लू है, मनोविकार है। अत: इसको मन तक ही सीमित रखना चाहिए वर्ना वचन द्वारा इसकी अभिव्यक्ति से विकर्म बन जाएगा। इस विषय में हमारा विचार है कि हम असन्तुष्टता एवं नाराजगी रूपी अशुद्ध संकल्प का निवारण कर सकें तो सर्वश्रेष्ठ है। परन्तु यदि हम इस वृत्ति का निरोध नहीं कर पा रहे हैं तो हमें मर्यादा, शालीनता, नम्रता और लोक संग्रह को साथ रखते हुए, इसे सम्बन्धित व्यक्ति अथवा दोनों के किसी श्रद्धेय व्यक्ति के साथ बैठ कर परस्पर हित-भावना से इसका हल कर लेना चाहिए। निस्सन्देह, अपनी नाराजगी अथवा असन्तुष्टता का स्थान-स्थान पर वर्णन करना योग-अनुशासन के विरुद्ध है और दैवी मर्यादा के विपरीत है। मन के अन्दर परेशान रहने, ईश्वरीय पुरुषार्थ से पीछे हटने और अनबन का वातावरण पैदा करने की बजाय शिष्टतापूर्वक उसकी अभिव्यक्ति करके उसका यथासम्भव उपाय ढूँढ़ निकालना ही श्रेष्ठ है। इस पर भी यदि कोई हल नहीं होता तो हमें उसे अपने पूर्व कर्मों का फल मान, योग की मस्ती में मस्त रहना चाहिए। योगी को कभी भी ऐसे क्रूर साधन नहीं अपनाने चाहिएँ जैसे कि आज के सामान्य जन अपना असन्तोष प्रगट करने के लिए अपनाते हैं।

असन्तुष्टता और नाराजगी के अतिरिक्त एक स्थिति और भी होती है। मान लीजिए, कोई व्यक्ति आपके साथ निजी तौर पर अमर्यादा से व्यवहार करता है अथवा संगठन या सभा में अपनी सीमा का अतिक्रमण करता है। यदि बार-बार ऐसा हो तो आप आगे के लिए उस व्यक्ति से केवल उतना ही सम्बन्ध रखते हैं जितना कि सेवार्थ आवश्यक है अथवा उस संगठन में उतना ही भाग लेते हैं जितना कि लोक संग्रहार्थ जरूरी है। इसे असन्तुष्टता या नाराजगी की संज्ञा देना गलत है क्योंकि अपने इस कृत्य द्वारा आप अपनी नाराजगी का नहीं बल्कि अस्वीकृति-मात्र का प्रकटीकरण चाहते हैं अर्थात् इस बात की अभिव्यक्ति करना चाहते हैं कि आप उस व्यक्ति की उस व्यवहार विधि को अथवा उस संगठन की कार्यविधि को सही नहीं मानते। इसमें आप किसी से अपना मित्रभाव नहीं गंवाते, न ही किसी से विरोध करते हैं।

कुछ लोग इतने तो नाराज हो जाते हैं कि परस्पर बोलना ही बन्द कर देते हैं। उनके मन में एक-दूसरे के लिए घृणा घर कर जाती है। राह जाते हुए वे एक-दूसरे को दुआ-सलाम भी नहीं करते या मुँह फेरकर निकल जाते हैं। योगी के लिए इस वृत्ति का पोषण हानिकारक है।

शुभचिन्तक और शुभचिन्तन, इस सुभाषित के विरुद्ध ही यह व्यवहार है। हमें अपने सौजन्य को नहीं छोड़ना चाहिए और लोक-संग्रह तथा ईश्वरीय सेवा को प्रमुख स्थान देना चाहिए। इसमें तो अपनी ही आध्यात्मिक उन्नति में स्वयं बाधा डाल कर अपना शत्रु आप बनना है।

इस लेख में हम दो शब्द और जोड़ना चाहते हैं। कुछ लोग मन में होते तो असन्तुष्ट अथवा नाराज हैं परन्तु पूछने पर मुस्करा कर कहते हैं, 'नहीं, नहीं, हम आपसे नाराज कैसे हो सकते है?' हमारे विचार में आज नहीं तो कल हमें वस्तु-स्थिति को मानसिक सन्तुलन के साथ कल्याण-भावना से और प्रिय वचनों में स्पष्ट कर ही देना चाहिए वर्ना अनबन की खाई बढ़ती है और अपने स्वभाव में भी कृत्रिमता आती है।

ऐसे भी कुछ लोग देखे जाते हैं कि उनके व्यवहार में विषमता पाकर जब आप उनसे पूछते हैं, 'क्यों जी, आप हमसे नाराज हैं?' तो वे झट से कहते हैं, 'नहीं, नहीं, हम नाराज तो कभी किसी से होते ही नहीं।' यदि वे सचमुच में नाराज नहीं होते या होकर भी बात को भुला देते हैं या न भुलाकर भी सद्व्यवहार करते ही रहते हैं तो वे सचमुच हमारे लिए अनुकरणीय और मान्य हैं। परन्तु ऐसे लोगों की भी कमी नहीं है जो इस विचार से अपने नाराज होने की बात इन्कार करते हैं कि लोग कहीं यह न कह दें कि 'इसे भी फीलिंग का फ्लू होता है।' यह तो अपनी कमजोरी को छिपाना, आलोचना से भयान्वित होना और सत्य से इन्कार करना है जो कि योगाभ्यासी को अभी भले ही किसी परिस्थिति से छुड़ा देता हो परन्तु अन्ततोगत्वा हानिकर है। ■■■

दिव्यगुणों की मूर्ति अनोखी

ब्र.कु. निर्विकार नरायन श्रीवास्तव, मिश्रिख तीर्थ (उ.प्र.)

दिव्यगुणों की मूर्ति अनोखी, दादी थी प्रकाशमणि।
साकार पिता से मिली पालना, शिव से सच्ची प्रीत जुड़ी।।
14 वर्ष की उम्र हुई, अध्यात्म को अपनाया है।
पूर्ण समर्पित हो करके, ईश्वरीय छात्र कहलाया है।
दादी-दीदी साथ-साथ, अमृत-वचनों को सुनती थी।
एक से बढ़कर एक थीं दोनों, वचनों को सुन गुनती थी।
पूर्वजन्म के कर्म जगे, जीवन से जोड़ी नई कड़ी।
दिव्यगुणों की मूर्ति अनोखी, दादी थी प्रकाशमणि।।
सन् 36 से 65 तक विद्यालय की लीडर मम्मा थी।
सन् 65 से 69 तक दीदी की सारी जुम्मा थी।
69 में शिव के भागीरथ, ब्रह्मा बाबा अव्यक्त हुए।
मुख्य-प्रशासिका बनेगी दादी, शिव-संदेश उच्चारित हुए।
पूरे विश्व की बनी प्रशासिका, लहर खुशी की दौड़ पड़ी।
दिव्यगुणों की मूर्ति अनोखी, दादी थी प्रकाशमणि।।
न्यूयार्क, नेरोबी, मुम्बई, रशिया, ग्याना, अमेरिका में।
जापान, जोधपुर, सिंगापुर, जाम्बिया और अफ्रीका में।
चेन्नई, कानपुर, कोलकाता, पटना, दिल्ली से काशी तक।
सेवाएँ देश-विदेश करी, रंगून से लेकर नासिक तक।
आपके चेहरे और चलन से, बाप की सूरत झलक पड़ी।
दिव्यगुणों की मूर्ति अनोखी, दादी थी प्रकाशमणि।।
विश्व-शान्ति योगदान में, दादी को पुरस्कृत किया गया।
शान्तिदूत के मैडल से छः बार सुशोभित किया गया।
मोहनलाल सुखाड़िया यूनिवर्सिटी से मानद डिग्री प्राप्त हुई।
यूएन के सोशल बोर्ड से एडवाइजर की पदवी प्राप्त हुई।
धर्मसत्ता दादी कहलाई, विश्व में सेवा उमड़ चली।
दिव्यगुणों की मूर्ति अनोखी, दादी थी प्रकाशमणि।।
137 देशों में दादी ने, सेवा का उत्थान किया।
25 अगस्त सन् 7 में अपना पुराना देहावसान किया।
धन्य-धन्य हे दादी तुमको, बार-बार अभिनन्दन है।
श्रद्धा-सुमन समर्पित करते, काटि-कोटि सत्-वन्दन है।
संगम से सतयुग में जाकर, बन जाओगी स्वर्गमणि।
दिव्यगुणों की मूर्ति अनोखी, दादी थी प्रकाशमणि।
साकार पिता से मिली पालना, शिव से सच्ची प्रीत जुड़ी।।

उन्हें गुस्सा नहीं आता

ब्रह्माकुमारी राजकुमारी, मजलिस पार्क, दिल्ली

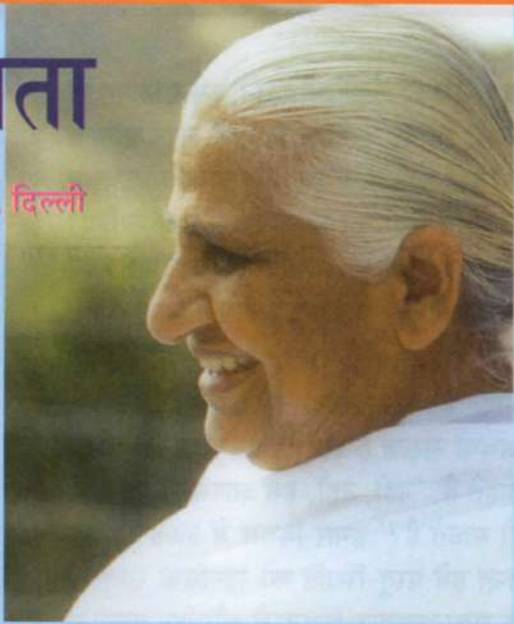

बहुत पुरानी घटना है, शान्तिवन में पीपल के पेड़ के नीचे बने गोल प्लेटफार्म पर मैं बैठी हुई थी कि अचानक मेरे कन्धे पर प्यार का हाथ रखते हुए वो मेरे पास बैठ गई और बोली, ओमशान्ति! क्या हाल है? प्रत्युत्तर में मैंने भी ओमशान्ति बोला और प्यार से उसे अपने पास बिठाया। बात करते-करते उसने एक छोटी-सी पिचकारी से मेरे ऊपर रंग डाल दिया। मेरी नई साड़ी रंग गई। मुझे तो एकदम गुस्सा आ गया कि यह क्या किया, मेरी इतनी बढ़िया साड़ी खराब कर दी आपने, अभी टीचर मीटिंग में जाना है, इतनी महँगी साड़ी सत्यानाश कर दी, आज पहली बार पहनी थी, अभी बदलने का भी टाइम नहीं है।

ज्यों-ज्यों मेरे क्रोध का पारा चढ़ता जाये, वह बहन हँसती जाये, मेरा गुस्सा बढ़ता जाए। इसी मौखिक झड़प में कुछ मिनट बीत गये। बड़े स्नेह से फिर उसने मुझे उठाया और कहा, आइए, चलें, जो होना था सो हो गया, अपना मूड खराब मत करो, होली है, नथिंग न्यू।

मैंने कहा, यह कोई ज्ञान है? स्थान तो देखा होता! अनमने मन से मैं उठ कर साथ चल दी। सामने ही दादी कॉटेज था। वहाँ तक हम पहुँच गए। आदरणीया दादी प्रकाशमणि जी, दादी कॉटेज से निकल कर आ रही थी। मैं खराब साड़ी पहने अपराध बोध से ग्रसित-सी थी। हमने दादी जी को ओमशान्ति की। दादी जी ने बड़े प्यार से हाथ मिलाया।

यह क्या, अचानक ही उस बहन ने दादी जी पर भी रंग डाल दिया। उनकी साड़ी खराब हो गई। उनके साथ वाली बहन गुस्से से बोलने लगी, तुम छोटे-बड़े का अन्तर भी नहीं समझती हो, यह भी नहीं देखती हो कि दादी जी को टीचर्स की मीटिंग में जाना है।

परन्तु, दादी जी मुस्करा रही थी और बड़े प्यार से बोली, रंग ही तो है न। और डालो! और डालो! वह बहन रंग डालती रही, दादी जी मुस्करातीं रही। जब रंग डालना बंद हो गया तो दादी जी बोली, बस, हो गया। आओ, अन्दर चलें। दोनों को, दोनों हाथों से पकड़ कर प्यार से अन्दर ले गई और विजिटर्स रूम में सोफे पर बैठ हमारा, सेन्टर का और सेन्टर पर आने वाले स्टूडेन्टस् का हाल पूछने लगी। फिर टोली मँगवाई और बड़े प्यार से हम दोनों के मुख में खिलाई।

उनके साथ वाली बहन ने कहा, बस, बहुत हो गया, अब आप कपड़े बदल लीजिए, टीचर्स क्लास में जाना है, इन खराब कपड़ों से थोड़े ही जाएँगे। इतने में रंग डालने वाली बहन बोली, कहाँ से खराब हैं कपड़े? उसके कहने के बाद देखा, ध्यान से दखो, कई बार देखा, रंग कहीं था ही नहीं। मैंने अपनी भी साड़ी देखी, कहीं भी रंग का नामोनिशान नहीं था। अचरज से सभी उसका मुख देखने लगे। वह बोली, केमिकल्स थे, उड़ गये।

मैं गहरी सोच में पड़ गई। भीतर से समझ आ गया। रंग तो उड़ गए परन्तु स्थितियों के अन्तर का भी पता चला। आखिर वे 'महान आत्माएँ' इसीलिए हो तो 'दादियाँ' कहलाई। उन्हें गुस्सा नहीं आता। ■■■

नम्रता की मूर्त – राजयोगिनी दादी प्रकाशमणि जी

ब्रह्माकुमार वासुदेव, चण्डीगढ़

दादी प्रकाशमणि जी का बचपन का नाम रमा था। उनके पिता ज्योतिषी थे। वे उन्हें मीरा कहते थे। वे बचपन में ही ओममण्डली से आकर्षित हो गई थीं और दसवीं की परीक्षा पास करके यज्ञ-सेवा में आ गई थीं। इनकी बहनें और समस्त परिवार भी बाद में समर्पित हो गया था। ब्रह्मा बाबा प्यार से उन्हें कुमारिका बुलाते थे। दिसम्बर, 1968 में जब वे कुछेक भाई-बहनों का ग्रुप लेकर मधुबन आई थीं तो बाबा ने उन्हें वहीं रोक लिया और कुछ दिनों में ही अनेक युक्तियों द्वारा संस्था का काम-काज कैसे चलता है, समझा दिया था। एक दिन बाबा ने रूह-रूहान करते हुए उनसे पूछ भी लिया था कि बच्ची, अगर बाबा एक तरफ बैठ जाये तो क्या तुम यज्ञ के कार्य को संभाल सकती हो? दादी जी ने बाबा को खुश करने के लिए बड़े फख्र से उत्तर दिया – ''हाँ बाबा, क्यों नहीं।'' उन्हें बाद में इस बात का अहसास हुआ कि बाबा ने यह बात गम्भीरता से उनसे पूछी थी।

सेवा में निमित्त और निर्माण भाव

दादी जी में स्नेह और शक्ति का अद्‌भुत सन्तुलन था। सभी की विशेषताओं को पहचान कर उन्हें सेवा में लगाना, सभी को सम्मान व स्नेह देना, माँ की तरह कमियों को मन में न रखकर, न केवल क्षमा करना बल्कि उन्हें और ही स्नेह देकर आगे बढ़ाना, ये सब दादी जी के गुण थे, जो सबको एक सूत्र में बाँधे रखते थे। जैसे दादी सबको दिल से स्नेह व सम्मान देती थीं, वैसे सभी भी उनका दिल से सम्मान करते थे। 'मैं' शब्द का प्रयोग दादी जी नहीं के बराबर करती थीं। वे सदा निमित्त और निर्माण भान से सेवा करती थीं। चाहे कितना बड़ा काम हो, हमेशा कहती – बाबा ज़िम्मेवार है। इस निश्चय से निश्चिन्त रहती थीं। जब वे किसी भवन की नींव रखती तो उसकी पूर्णता की सीमा भी निर्धारित कर देती थी। उनकी सूझबूझ के कारण ही ज्ञानसरोवर और शान्तिवन का निर्माण कार्य समय पर पूर्ण हुआ था। दादी जी सभी बहनों को अपनी सखी कहती थीं और सभी बहनें उनसे भी आगे बढ़ें, ऐसी शुभकामनाएँ रखती थीं।

वे स्वच्छता प्रिय थी

माताओं से उनका विशेष स्नेह था। उनके लिए वे विशेष कार्यक्रम बनाती थीं ताकि उनकी उन्नति हो। दादी जी दिन में चार बार मुरली पढ़ती थीं। रात्रि को सोने से पहले तो अवश्य पढ़ती थीं। वे यज्ञ के कार्य को एकॉनामी से चलाती थीं। किसी भी कार्य में न बहुत साधारण हो, न ऊँचा भभका हो बल्कि मध्यम-सा हो, इस बात का वे ध्यान रखती थीं। वे स्वच्छता प्रिय थीं और नम्रता की भी देवी थीं। बड़े-बड़े साधू-संतों, मंत्रियों, प्रधानमंत्री और राष्ट्रपति आदि से हाथ जोड़कर मिलती थीं। वे कहा करती थीं कि इतनी बड़ी संस्था का अपने को हैड समझना मानो हैडेक (सरदर्द) लेना है। इसलिए वे सदा स्वयं को सेवाधारी समझती थीं और हल्की रहती थीं। सदा उमंग-उत्साह में उड़ते रहना और सबको उड़ाते रहना, यह उनका नैचुरल संस्कार था। उनकी बुद्धि इतनी दिव्य और निर्मल थी कि किसी भी बात का निर्णय वे एक सेकण्ड में ले लेती थीं।

दादी जानकी जी से उनका बहुत प्रेम था। जब दादी जानकी जी लंदन में होती थीं तो दादी प्रकाशमणि जी सोने से पहले रोज रात्रि को एक बार ज़रूर फोन द्वारा उनका कुशल-क्षेम पूछती थीं। शान्तिवन में होने पर तीनों दादियाँ साथ में ही भोजन करती थीं।

अपने इन्हीं गुणों और विशेषताओं के कारण वे लगभग 37 साल प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय की मुख्य-प्रशासिका रहीं। उनके सेवाकाल में संस्था का बहुत प्रचार-प्रसार हुआ। यह विश्व विद्यालय संसार की सबसे बड़ी महिला एनजीओ है। दुनिया में मानवता की सेवा करने और विश्व में शान्ति के लिए किये जाने वाले प्रयासों को ध्यान में रखते हुए यूएन ने इस संस्था को कई सम्मान प्रदान किये हैं। ■■■

अगर आप दुनिया से अपने लिए सर्वश्रेष्ठ पाना चाहते हैं तो आपको दुनिया को अपना सर्वश्रेष्ठ देना भी होगा

पत्र सम्पादक के नाम

यूँ तो 'ज्ञानामृत' के हर लेख से प्रेरणाएँ प्राप्त होती हैं परन्तु कुछ लेख तो इतने मर्मस्पर्शी-हृदयग्राही होते हैं कि उन्हें बार-बार पढ़ने को मन करता है।

अप्रैल, 2019 के अंक में प्रकाशित 'सम्बन्धों के संसार में बदलाव' अपने आप में अनूठा है। स्वार्थ व इच्छा प्रधान आज के समय में सम्बन्ध-सम्पर्क में रहने वाले तथा आने वाले व्यक्तियों के व्यवहार में परिवर्तन अप्रत्याशित नहीं है। आत्मशक्ति की न्यूनता और अज्ञानता के कारण सम्बन्धों में आने वाली कड़वाहट और खटास से हम अपने को असहज अनुभव करने लगते हैं। अपनों से मोह भंग होने पर फिर नये सम्बन्धों की तलाश में भटकने लगते हैं। अन्य जगहों से भी निराशा मिलती है तो सारी दुनिया ही एक-सी नजर आने लगती है क्योंकि हमारे सम्बन्ध ही देह और देह-सुख के पदार्थों तक केन्द्रित हो चले हैं।

विदुषी लेखिका के विचार अज्ञानता के आवरण का अनावरण कर यह समझ देते हैं कि सृष्टि के खेल में हर जीवात्मा अपने आप में अनोखी है, अद्वितीय है, हरेक के विचार, कर्म, गुण, संस्कार भिन्न हैं और हरेक आत्मा अपने-अपने गुण, कर्म में भी स्थायी-स्थिर नहीं है। ऐसे में कोई सदा और सम्पूर्ण रूप से हमारा बना रहे, यह कैसे सम्भव हो? हमारी ये इच्छा या अपेक्षा ही अज्ञान भरी है। हम आत्मा के स्वभाव और अस्तित्व की इच्छा के विपरीत जाकर जीयेंगे तो दुख के अलावा क्या पायेंगे? ऐसे हालातों में आध्यात्मिकता हमारी स्थायी मदद करती है। घर-गृहस्थ में, सम्बन्धियों के बीच सहजता से रहने के लिए सही समझ देने वाले लेख के लिए विदुषी लेखिका को बारम्बार नमन्।

'हे साधक जागो, यह वक्त जा रहा है!' लेख अधिकांश की समय गँवाने की मूल कमजोरी की ओर ध्यान खिंचवाता है। अक्सर करके हम भूतकाल को बार-बार याद किया करते हैं और भविष्य के ख्याली पुलाव पकाते रहते हैं लेकिन वर्तमान समय या 'अब' जो हमारे हाथ में है उसकी ओर समुचित ध्यान नहीं देते जबकि हर कर्म में सफलता के लिए हमारी सम्पूर्ण एकाग्रता 'अब' पर चाहिए। समय की कमी का रोना रोने वाले यदि बीती बातें, परचिन्तन, आलस्य-अलबेलापन, अस्वस्थ मनोरंजन और अनुचित इंटरनेट से बचे रहें तो वे पायेंगे कि उनके पास ढेर-सा समय पड़ा है, जो साधारण और व्यर्थ बातों में जा रहा था।

खान-पान, आचार-व्यवहार में आते जा रहे बदलाव के कारण बुद्धिमान कहे जाने वाले मानव के स्वास्थ्य में अन्य प्राणियों की तुलना में तेजी से गिरावट आती जा रही है। शरीर की रोग-प्रतिरोधक क्षमता दिन पर दिन कम होती जा रही है। ऐसे में 'निरोगी काया में राजयोग का योगदान' लेख सहज रूप से अपनायी जा सकने वाली समझ प्रदान करता है।

'राम काज किये बिना मोहि कहाँ विश्राम' लेख सभी ब्रह्माकुमार-ब्रह्माकुमारी भाई-बहनों के लिए अनुकरणीय है।

'ज्ञानामृत' की सुन्दर प्रेरणाप्रद रचनाओं के लेखकों, पत्रिका की समस्त सामग्री के संकलन, मुद्रण, प्रकाशन एवं प्रेषण में लगे सभी भाई-बहनों का बहुत-बहुत आभार एवं धन्यवाद।

ब्र.कु. के.एल.छावड़ा, रुड़की (उत्तराखण्ड)

ज्ञानामृत के फरवरी अंक में प्रकाशित 'अन्न की बर्बादी अक्षम्य अपराध है' हृदयस्पर्शी व मार्मिक है। किसी के द्वारा फेंका हुआ अन्न, किसी के लिए कितनी अहमियत रखता है, सटीक उदाहरण देकर बताया गया है। इस संस्था में परोसे जाने वाले 'ब्रह्माभोग' के हर कण को बहुमूल्य प्रसाद के रूप में स्वीकार किया जाता है, जो सराहनीय है। किसी ने ठीक ही कहा है, **'अन्न के कण को और आनन्द के क्षण को व्यर्थ नहीं जाने देना चाहिए।'**

धनेश्वर प्रसाद, केन्द्रीय जेल, रायपुर (छ.ग.)

सद्गुण ही सम्पदा हैं

■■■ ब्रह्माकुमारी उर्मिला, शान्तिवन

ज्ञानामृत के एक पुराने अंक में एक बहुत सुन्दर चित्र बना हुआ है जिसमें दिखाया गया है कि एक व्यक्ति आत्म-अभिमान का बीज बो रहा है, उससे एक वृक्ष की उत्पत्ति हुई है जिस पर सत्यता, अन्तर्मुखता, पवित्रता, नम्रता, करुणा आदि-आदि सद्गुणों के फल लगे हैं। दूसरी ओर, एक अन्य व्यक्ति देह-अभिमान का बीज बो रहा है, उससे भी एक वृक्ष की उत्पत्ति हुई है जिस पर असत्यता, बाह्यमुखता, हिंसा, क्रोध, अहंकार आदि-आदि जहरीले फल लगे हैं। इस चित्र का अर्थ यह है कि आत्म-अभिमानी स्थिति सर्व गुणों की जनक है और देह-अभिमानी स्थिति सर्व दुर्गुणों की जड़ है।

दो प्रश्न

प्यारे शिवबाबा प्रतिदिन के ईश्वरीय महावाक्यों में हम सभी को आत्म-अभिमानी बनने का पाठ पढ़ाते हैं और कहते हैं, हर आत्मा के प्रति भाई-भाई की दृष्टि रखो, यह दृष्टि ही सर्वोत्तम दृष्टि है। इस सम्बन्ध में कई भाई-बहनों के मन में कुछ प्रश्न भी पैदा होते हैं। एक प्रश्न तो यह है कि शरीर इतना बड़ा है और आत्मा इतनी छोटी है इसलिए बड़ी वस्तु पर सहज नजर चली जाती है, इसके लिए क्या करें? दूसरा प्रश्न यह होता है कि प्रतिदिन वही-वही अभ्यास करते उमंग में कुछ कमी आ जाती है, इसके लिए क्या करें?

लक्ष्य पर एकाग्रता

प्रथम प्रश्न के उत्तर में यही कहेंगे कि जब कोई अपने लक्ष्य पर केन्द्रित होता है तो उसे बाकी बातें दिखते हुए भी नहीं दिखती। जैसे कोई मरीज, जिसके पेट में गाँठ है, एक डॉक्टर के पास जाता है। डॉक्टर भले ही मरीज को सिर से पाँव तक देखता है परन्तु उसकी एकाग्रता कहाँ है? उसका सारा ध्यान गाँठ की जाँच-परख पर केन्द्रित है क्योंकि उसका काम उस गाँठ से ही है। इसी प्रकार, किसी भी व्यक्ति को देखते हमारा काम किससे है? सकाश देनी है, शुभभावना देनी है, शिवबाबा का परिचय देना है, ये सब कार्य तो आत्मा से ही करने हैं इसलिए एक बार नजर भले ही शरीर पर जाए पर हमारे लक्ष्यों की पूर्ति आत्मा पर केन्द्रित रहने से ही होगी।

इसी प्रकार, एक औषधि वैज्ञानिक वन में कुछ जड़ी-बूटियाँ लेने जाता है। वन में हजारों प्रकार के छोटे-बड़े पेड़-पौधे हैं परन्तु वह उनको देखते हुए भी अनदेखा कर आगे बढ़ता जाता है और जैसे ही अपनी मनचाही बूटी को देखता है, रुक जाता है। आँखें तो उसकी खुली हैं, देख तो वो सब रहा है परन्तु उसकी एकाग्रता उसी बूटी पर है। यदि किसी पेड़ के किसी विशेष हिस्से से दवा बनानी हो तो भी भले ही देखेगा सारे पेड़ को पर मन की एकाग्रता तो जरूरत अनुसार उसकी जड़ या छाल या फूल या पत्तों पर ही बनी रहेगी। हम भी इस सृष्टि रूपी काँटों के जंगल में प्रतिदिन अनेकानेक मानवों के सम्पर्क में भले ही आते हैं परन्तु हमारा काम उन कलियुगी शरीरों से न होकर परमधाम से आई आत्मा से ही है। उस आत्मा को परमधाम का रास्ता दिखाने से है।

एक गृहिणी भी बाजार से आवश्यक सामान लेने जाती है तो सैकड़ों दुकानों के आगे से गुजर कर निश्चित जगह पहुँचती है। रास्ते में आए दृश्यों को देखते हुए भी अनदेखा करती जाती है क्योंकि उसे उनसे कुछ लेना-

उन सभी कारणों को भूल जाएँ कि यह कार्य नहीं होगा, केवल एक कारण खोजें कि यह कार्य सफल होगा

देना नहीं है। दुकान में हजारों प्रकार का सामान होते हुए भी वह अपनी जरूरत की चीजों पर एकाग्र रहती है और अपना समय और ऊर्जा बचाती है। इस प्रकार कितने ही उदाहरण लिए जा सकते हैं जिनमें व्यक्ति विस्तार के बीच रहकर भी सार में टिका रहता है। हम भी शरीर रूपी विस्तार में छिपे, सार रूपी आत्मा हीरे पर अपनी दृष्टि, वृत्ति केन्द्रित रख भाई-भाई का भाव अपना सकते हैं।

मन-बहलाव नहीं, मन-परिवर्तन

ऊपर वर्णित दूसरे प्रश्न के उत्तर में हम यही कहेंगे कि यह ईश्वरीय पढ़ाई है और पढ़ाई में दोहराई का विशेष महत्व होता है। एक अच्छा विद्यार्थी साल भर उन्हीं पाठों को दोहराता रहता है, रटता रहता है। यदि कोई उसे कहे कि क्या तुम रोज-रोज वही पाठ पढ़ते हो, बोर नहीं होते क्या, लाओ तुमको महादेवी वर्मा की कविताएँ ला दूँ, जयशंकर प्रसाद के नाटक ला दूँ, मुंशी प्रेमचंद की कहानियाँ ला दूँ, तो वह क्या कहेगा? यही कि मैं यह पढ़ाई मन बहलाने के लिए नहीं कर रहा, अपना भविष्य बनाने के लिए कर रहा हूँ। यदि मन बहलाने लग गया और भिन्न-भिन्न मनोरंजक बातें पढ़ने लगा तो परीक्षा में गोल-गोल ही आएगा।

हम भी यह ईश्वरीय पढ़ाई मन बहलाने के लिए नहीं कर रहे हैं वरन 21 जन्मों के लिए भाग्य बनाने के लिए कर रहे हैं। निस्सन्देह इसमें मन-बहलाव भी है, यह रूखी पढ़ाई नहीं है लेकिन केवल मन-बहलाव नहीं है, मन का परिवर्तन और मन का सशक्तिकरण भी है। इसलिए उन्हीं आवश्यक पाठों को रोज दोहराते भी हम आनन्द महसूस करते हैं क्योंकि एक तो उनकी दोहराई कराने वाला स्वयं भगवान है और दूसरा, हम स्वयं भी इस दोहराई से भरपूरता का अहसास करते हैं।

मूल आवश्यकताएँ नहीं बदलतीं

फिर हम यह भी जानते हैं कि जो मूलभूत आवश्यक चीजें हैं वे तो रोज ही चाहिए होती हैं, उन्हें बदला नहीं जा सकता। जैसे हम भोजन में प्रतिदिन वही आटा, दाल, मसाले, पानी, सब्जी, चिकनाई, मीठा प्रयोग करते हैं। भोजन बनाने, खाने के बर्तन वही, डायनिंग वही, गैस चूल्हा वही, फ्रीज वही और भी बहुत सारी बुनियादी चीजें वही रहती हैं। कभी हमने कहा क्या कि ये सब वही हैं, इनका प्रयोग करते-करते उमंग कम हो गया, नहीं ना। इसी प्रकार आत्मिक भोजन में भी कई बुनियादी चीजें रोज लेनी अनिवार्य हैं। उनमें से आत्मिक भाव और परमात्म-स्मृति रूपी भोजन मूल रूप से अनिवार्य है जिसे रोज बुद्धि को स्वीकार करना ही है।

गुणों पर बलिहार हैं रत्नराशियाँ

लेख के शुरू में हमने चर्चा की थी कि आत्म-अभिमान रूपी धरनी पर ही सद्‌गुणों के फूल खिलते हैं। एक-एक सद्‌गुण अरबों-खरबों-पदमों से भी अमूल्य है। संसार भर के हीरे-मोती-जवाहरात भी सद्‌गुणों के आगे पानी भरते हैं, उनकी चाकरी करते हैं। गुणवान व्यक्ति पर अनेकानेक रत्नराशियाँ कुर्बान जाती हैं क्योंकि हीरे-जवाहरात तो भौतिक जगत की जड़ सम्पदा है परन्तु दैवीगुण तो चेतन आत्मा की बहुमूल्य सम्पदा हैं। चेतन आत्मा की इस बहुमूल्य सम्पदा पर, जड़ जगत की हर वस्तु सदा बलिहार है ही है।

लौट आएगी लुप्तप्राय सम्पदा

जब मानव दैवीगुण सम्पन्न था तो सर्व हीरे-मोती उसके कदमों में थे परन्तु जब वह गुणों से हीन हो गया तो हीरे-मोती भी अदृश्य हो गए और मानव से उनका मूल्य अधिक हो गया। सृष्टि-चक्र का वर्तमान दृश्य ऐसा ही चल रहा है परन्तु इस दृश्य को पलटाने के लिए स्वयं भगवान धरा पर अवतरित हुए हैं। वे हमें गुणों के गहने पहना रहे हैं जिससे लुप्तप्राय सम्पदा पुनः लौट आएगी। इस सम्बन्ध में एक बहुत सुन्दर कहानी इस प्रकार है –

करुणा के अभाव में दौलत हुई अस्थाई

एक बार भगवान अपने प्रिय भगत के साथ मृत्युलोक की यात्रा पर निकले। रास्ते में उन्होंने एक

ब्राह्मण को भिक्षा मांगते देखा। भगत को दया आ गई। उसने सोने की सौ मोहरें उस ब्राह्मण की झोली में डाल दीं और सोचा, मैंने बड़ा परोपकार का कार्य कर दिया, अब यह ब्राह्मण आजीवन भिक्षा मांगने से छूट जाएगा। ब्राह्मण ने जैसे ही भिक्षा में मिली सौ मोहरें देखीं, उसकी आँखें चौंधिया गईं। वह उस भिक्षा को बगल में दबाकर भागने लगा। रास्ते में एक अपाहिज ने उसे पुकारा, हे ब्राह्मण, बड़ी धूप है, मुझे उस छाया वाले पेड़ तक पहुँचा दे। ब्राह्मण धन पाकर थोड़े गर्व में आ गया था। जहाँ गर्व है वहाँ करुणा उड़ जाती है और जहाँ करुणा रूपी गुण नहीं, वहाँ दौलत भी स्थाई नहीं रह पाती है। अपाहिज की आवाज को अनसुना कर ब्राह्मण आगे बढ़ता जाता है और एक चोर उसकी पोटली छीनकर भाग जाता है। इस प्रकार ब्राह्मण अपनी पूर्व स्थिति में आ जाता है।

पुन: करुणा की अवहेलना

अगले दिन भगवान और भगत फिर वहीं से गुजरते हैं और ब्राह्मण को पुन: भीख मांगते देख कारण जानना चाहते हैं। ब्राह्मण सारी बात सुना देता है। भगत इस बार उसे एक अमूल्य हीरा देता है और सोचता है, इसे बेचकर तो इसकी सात पुश्तें खाती रहें, इतना धन मिल सकता है और यह भिक्षा मांगने से छूट सकता है। हीरा लेकर ब्राह्मण फिर गर्वित होता है और तेज गति से घर की ओर चलने लगता है। इस बार रास्ते में उसे एक प्यासा वृद्ध मिलता है, जो पानी पिलाने की प्रार्थना करता है परन्तु गर्व में चूर ब्राह्मण उसकी आवाज को अनसुना कर, करुणा को भुलाकर, जल्दी से घर पहुँचता है और हीरे को एक मटके में रखकर सो जाता है। उसकी पत्नी उस मटके को उठाकर पानी भरने चली जाती है और हीरा नदी में गिर जाता है। ब्राह्मण जब जागता है तो पत्नी से हीरे के बारे में पूछता है। वह कहती है, मुझे कुछ मालूम नहीं, मैं तो मटका नदी के पानी से भरकर ले आई हूँ।

करुणा रूपी गुण का चमत्कार

अगले दिन भगवान और भगत देखते हैं कि यह तो आज फिर भिक्षा मांग रहा है। पूछने पर ब्राह्मण सारी आपबीती सुनाता है। इस बार भगवान उसे एक सिक्का देते हैं। कहने को तो ये सिक्का है परन्तु है यह करुणा रूपी गुण। भगत सोचता है कि जब मेरी सौ मोहरों से, अमूल्य हीरे से इसका भाग्य नहीं बदला तो क्या एक सिक्के से बदल जाएगा! ब्राह्मण सिक्का लेकर चल पड़ता है। रास्ते में वह नदी पर एक मछुआरे को मछली पकड़ते देखता है और अभी-अभी जल से निकली तड़पती एक मछली को देख करुणाशील होकर, उस सिक्के के बदले में मछली खरीद लेता है। मछली को अपने कमण्डल में डाल लेता है जिसके पानी में वह जी उठती है। फिर अपना मुँह खोलती है तो उसमें से हीरा बाहर निकल आता है। ब्राह्मण थोड़ा और आगे चलता है। उसके चेहरे पर खुशी और हल्केपन के भाव देख राजा का एक सिपाही आकर्षित हो उसके साथ-साथ चलने लगता है। चोर का घर रास्ते में पड़ रहा है। चोर दूर से देखता है कि ब्राह्मण सिपाही को लेकर आ रहा है तो डर जाता है और मोहरों वाली पोटली को गली में फेंक देता है। ब्राह्मण पोटली को पहचान लेता है, उठा लेता है। इस प्रकार, खोए हुए दोनों धन उसे मिल जाते हैं और वह खुशी-खुशी जीवन व्यतीत करने लगता है।

गुणों की रक्षा में समाई है धन की रक्षा

कहानी का सन्देश यही है कि द्वापरयुग से अनेक भगत आत्माएँ दयाशील होकर धन-दान द्वारा गरीबी मिटाने की कोशिश करती आई हैं परन्तु बिना गुणों के यदि धन मिल भी जाता है तो वह गर्व पैदा करता है और सुख नहीं दे पाता है। कहानी का ब्राह्मण धन पाकर इतना गर्वोन्मत्त हो जाता है कि अपाहिज और प्यासे वृद्ध की आवाज ही नहीं सुनता है। करुणा (कोई भी सद्गुण) की अवहेलना करने से उसका धन भी छिन जाता है। धन-सम्पदा तभी सुरक्षित रह पाती है जब हम गुणों की रक्षा करते हैं। भगत रूपी धनी व्यक्ति ब्राह्मण को धनी करने के लिए अपने प्रयास को दोहराता है परन्तु इस बार भी ब्राह्मण करुणा भाव की उपेक्षा करता है और हीरा भी गवाँ देता है।

एक सद्‌गुण हजारों हीरे-मोतियों से अमूल्य

द्वापरयुग से धन-दान के द्वारा हम सृष्टि को अमीर बनाने की कोशिश करते आए परन्तु देने वाले और लेने वाले दोनों ही अमीर नहीं बने, और ही गरीबी बढ़ती गई। कलियुग के अन्त में भगवान आकर इस गरीबी को सदाकाल के लिए मिटाने की घोषणा करते हैं। इसके लिए ज्ञान, गुण, शक्तियों का दान देते हैं जिसका प्रतीक है करुणा रूपी एक सिक्का। इसे देख दानी भगत जैसी आत्माएँ सोचती हैं, हमारे इतने-इतने दान से गरीबी नहीं मिटी तो क्या एक सिक्के से मिट जाएगी! वो यह नहीं समझ पाता कि धन, सद्‌गुणों के पीछे अपने आप खिंचा चला आता है। जब ब्राह्मण करुणा रूपी सिक्का लेकर चलता है और करुणा के वश मछली की जान बचाता है तो हीरा भी मिल जाता है और सोना भी। करुणा को छोड़ने से दोनों छिन गए थे। यहाँ करुणा का मतलब केवल करुणा नहीं, यह सर्व गुणों की प्रतीक है। जब भगवान शिव द्वारा दिए गए अनेक गुणों को जीवन में धारण करते हैं तो छिने हुए हीरे-जवाहरातों के महल और सम्पूर्ण ऐश्वर्य हमें पुनः मिल जाता है। इसलिए एक-एक सद्‌गुण या दैवीगुण हजारों-हजार हीरे-मोतियों से भी अमूल्य है। ■■■

रक्षा-बन्धन आज की परिस्थिति में ... पृष्ठ 3 का शेष भाग

'भाई' का कर्त्तव्य है, तब फिर सगे भाई को यह कर्त्तव्य जतलाने की क्या ज़रूरत थी? सहोदर होने के कारण तथा स्नेह-वश भी हरेक भाई स्वाभाविक तौर पर यह कर्त्तव्य निभाता ही है और जो निभाना ही न चाहे या जिसका स्नेह ही न हो, वह तो राखी बाँधने पर भी रक्षा नहीं करेगा। श्रीमद्भागवत् में जिस कंस का वर्णन है, उसने तो अपनी बहन देवकी को मारने के लिए तलवार निकाल ली थी। तो स्पष्ट है कि अगर दृष्टि-वृत्ति बदल जाये तो भाई भी कसाई हो जाता है और दृष्टि-वृत्ति ठीक रहे तो कसाई भी भाई बन सकता है। 'यम' के बारे में लोग कहते हैं कि वह सबको दण्ड अथवा ताड़ना देता है। अतः मानव मात्र के लिए वह भयानक है परन्तु अपनी बहन 'यमुना' का तो भाई ही है। अतः जबकि भाई अपनी बहन की रक्षा के लिए वैसे भी स्नेह तथा सम्बन्ध के कारण बाध्य है, तो रक्षा-बन्धन को शारीरिक रक्षा के लिए एक रस्म मानना विवेक-सम्मत नहीं प्रतीत होता।

'रक्षा-बन्धन' का वास्तविक अभिप्राय

'रक्षा-बन्धन' त्योहार के जो अन्य नाम हैं, उनसे रक्षा-बन्धन का वास्तविक अभिप्राय स्पष्ट हो जाता है। उदाहरण के तौर पर इस त्योहार को 'पुण्य प्रदायक पर्व' अथवा 'विष तोड़क पर्व' भी कहा जाता है। इससे सिद्ध है कि इसका सम्बन्ध विषय-विकारों को छोड़ने तथा पवित्र आत्मा या पुण्यात्मा बनने से है। इस त्योहार का यह अभिप्राय हम इसलिए भी सही मानते हैं क्योंकि रक्षा-बन्धन बहनों के अतिरिक्त ब्राह्मण भी अपने यजमानों को बाँधते हैं। ब्राह्मण लोग धर्म के कार्यों में ही हाथ डालते हैं और पवित्र कार्य करना ही उनके लिए नियम है। वे उस दिन केवल राखी नहीं बाँधते बल्कि मस्तक पर तिलक भी देते हैं। बहनें भी अपने भाइयों को मस्तक पर चन्दन अथवा केसर का तिलक देती हैं और भृकुटि में यह तिलक आत्मा को ज्ञान के रंग में रंगने अथवा आत्मिक स्मृति में रहने का प्रतीक है। तो स्पष्ट है कि रक्षा-बन्धन भी पवित्रता रूपी धर्म में स्थित होने की प्रतिज्ञा करने अथवा 'काम' (वासना) रूपी विष को तोड़ने (छोड़ने) का प्रतीक है।

रक्षा-बन्धन पवित्रता का प्रतीक है।

रक्षा-बन्धन का हमने ऊपर की पंक्तियों में जो भाव बताया है, उसे समझने से ही इसका महत्त्व मालूम हो सकता है। यों तो रक्षा-बन्धन रेशम या नायलान के धागों से बना हुआ या सूत के धागों से मौलि के रूप में बना हुआ होता है और कुछ रुपये ही उसका मूल्य होता है परन्तु वास्तव में उसका माहात्म्य तो बहुत बड़ा बताया गया है। अवश्य ही वह किसी उच्च भाव का प्रतीक होगा।

उदाहरण के तौर पर कमल फूल भी कोई अधिक महंगा नहीं होता। परन्तु जिस भाव अथवा गुण का वह प्रतीक है, यदि उस गुण को कोई धारण कर ले तो उसका जीवन बहुत ही उच्च और पूज्य बन जाता है। कमल पुष्प तो वास्तव में अलिप्त जीवन का प्रतीक है। जो मनुष्य इस विचार (Idea) को अपने जीवन में धारण करता है, उसका जीवन आदर्श (Ideal) बन जाता है। जो नारी अनासक्ति को लक्ष्य बना लेती है वह लक्ष्मी बन जाती है। जो कमल को ध्येय मानती है, उसकी देह के हरेक अंग के साथ 'कमल' शब्द का प्रयोग होने लगता है, जैसे – कमल नेत्र, कमल मुख, कमल हस्त आदि। इसी तरह, गुलाब का फूल भी बहुत सस्ते दामों में मिल जाता है परन्तु गुलाब की विशेषता यह है कि वह काँटों में रहता हुआ भी स्वयं कोमल होता है और सुगन्धि से दूसरों को खुश करने की सेवा करता है। इसलिए लोग उसकी ओर खिंचे हुए जाते हैं। इन गुणों के कारण ही देश इन्हें अपना 'राष्ट्रीय पुष्प' (National Flower) मानकर इन्हें गौरव का स्थान देते हैं।

यों तार तो एक मामूली-सी चीज़ है परन्तु जब उस तार में बिजली होती है तब वह तार बहुत काम करती है। एक फ्यूज की तार अपनी जगह से उड़ जाये तो हीटर (Heater) बन्द हो जाता है, कारखाना रुक जाता है, घरों में अन्धेरा हो जाता है और हज़ारों लोग बेकार खड़े हो जाते हैं और अन्धेरे के कारण रास्ते में दुर्घटनाएं हो जाती हैं। तो देखिये, अपने स्थान पर फ्यूज की एक छोटी-सी तार कितना बड़ा काम करती है!

इसी प्रकार, राखी भी कुछ धागों ही की बनी होती है परन्तु उन धागों में जो भाव भरा होता है, जिस विचार की वह प्रतीक होती है वह भाव जीवन को बहुत उच्च बनाने वाला होता है। विचार से ही संसार में बड़े-बड़े परिवर्तन होते हैं, मनुष्य और पशु में भेद ही यह है कि मनुष्य किसी उच्च विचार को जीवन में धारण करके बहुत उन्नति कर सकता है। अत: राखी जिस विचार या आदर्श की प्रतीक है अथवा राखी में जो भाव या अभि-प्राय छिपा है, वही मुख्य चीज़ है, उसे धारण करने के लिए प्रेरणा देना ही राखी की रस्म का मुख्य उद्देश्य है, उससे ही राखी की सारी महिमा है। यदि उसे कोई छोड़ दे तब तो राखी बस रुपये-दो रुपये की चीज़ है। लोग जब किसी को कहते हैं कि – ''यह बात गाँठ बाँध लो'' तो उसका अभिप्राय यही होता है कि 'बुद्धि' में इस बात को पक्की तरह धारण कर लो। परन्तु स्मृति के लिए लोग रूमाल को या माताएं अपनी ओढ़नी को गाँठ बाँध लेती हैं। ठीक इसी प्रकार, मौली को कलाई पर बाँधने का अभिप्राय भी यह बात धारण करने के लिए प्रेरणा देना था कि पवित्रता रूपी व्रत को बुद्धि में धारण करो।

आज की परिस्थिति में रक्षा-बन्धन

समय बदलने के साथ-साथ यह त्योहार पवित्रता अथवा धर्म की रक्षा की बजाय 'शारीरिक रक्षा' के लिए मनाया जाने लगा। फिर जब देश पर विधर्मियों तथा विदे-शियों ने आक्रमण किये तब वीरांगनायें अपने-अपने पति को देश की रक्षार्थ रण-भूमि में भेजते समय भी उन्हें बाँधने लगीं ताकि वह दृढ़ प्रतिज्ञ होकर संग्राम में कूद पड़ें, वह पत्नी के प्यार तथा सन्तति के मोह में वहाँ से वापस न भाग आये। ललनाओं द्वारा इस प्रकार राखी बाँधे जाने से उन वीरों को युद्ध के लिए बहुत प्रेरणा मिलती थी।

परन्तु आज की परिस्थिति बहुत भिन्न है। आज तो मानव काम, क्रोधादि शत्रुओं से बुरी तरह पीड़ित और आहत है। अत: अब परमपिता परमात्मा, जो ही मनुष्य के कल्याणकारी और रक्षक हैं, सभी नर-नारियों को आदिम और वास्तविक रहस्य से राखी बाँधते हैं। वे कहते हैं कि अब विश्व के लिए संकट का समय (Emergency) है। एटम और हाइड्रोजन बमों द्वारा विश्व पर मुसीबत बन आई है और विकारों की सूक्ष्माग्नि से दुनिया झुलस रही है। अत: अब इस सृष्टि को इन विकारों रूपी महाशत्रुओं से बचाना है और यहाँ स्वर्ग का राज्य-भाग्य स्थापित करना है। अत: अब आप पवित्र बनो और उस पवित्रता के व्रत या प्रतिज्ञा की प्रतीक राखी को बाँध कर परस्पर भाई-बहन या भाई-भाई की शुद्ध दृष्टि और वृत्ति को धारण करो। आज फिर ऐसा ही रक्षा-बन्धन बाँधने की ज़रूरत है। ■■■

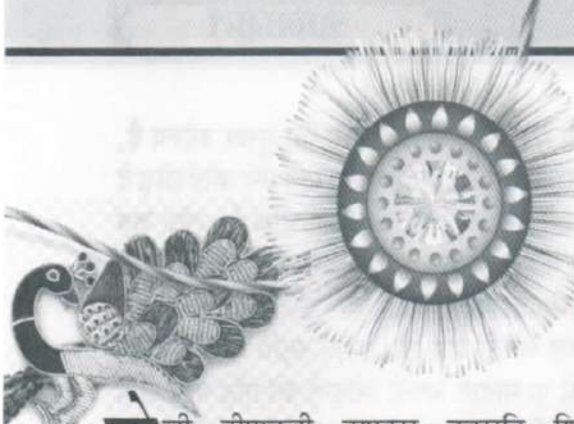

त्यौहारों की मौलिकता एवं रक्षाबंधन का मर्म

■■■ ब्रह्माकुमार विपिन गुप्ता, टीकमगढ़ (म.प्र.)

होली, दीपावली, दशहरा, नवरात्रि, शिवरात्रि, जन्माष्टमी, रक्षाबंधन आदि अनेकानेक त्यौहार हमारी भारतीय संस्कृति का शृंगार हैं। इनके माध्यम से संस्कृति में रची-बसी श्रेष्ठ भावनाओं एवं जीवन मूल्यों की अभिव्यक्ति होती है। जब तक इन मूल्यों एवं भावनाओं के साथ ये त्यौहार मनाये जाते रहे जब तक इन त्यौहारों ने हमारे उच्च संस्कारों की स्मृति को जगाए रखा। त्यौहार बीत जाने पर भी उनकी खुशी का अनुभव कई दिनों तक बना रहता था और ये अहसास हमें प्राचीन भारतीयता से जोड़े रखता था।

बदलते दौर के साथ आज जिस भौतिक भोगवादी जीवनशैली से समाज जुड़ गया है उस जीवनशैली को यदि डिस्पोजल जीवनशैली नाम दिया जाये तो गलत नहीं होगा जिसमें यूज एण्ड थ्रो का सिद्धांत काम कर रहा है। चाहे करीबी सम्बंध हों, व्यक्ति हों, साधन व संसाधन हों, सबके लिये एक ही फार्मूला है, यूज एण्ड थ्रो। इस स्वार्थवादी भोगवादी मानसिकता के चलते इन त्यौहारों का मर्म भी प्रायः खो-सा गया है। इन त्यौहारों के मायने कइयों के लिये एक छुट्टी का दिन, व्यापार का मौका, सजने-धजने का अवसर और अधिकांश के लिये यह रस्मी रीति-रिवाज निभाने का दिन मात्र बनकर रह गया है। अति धनाढ्य वर्ग वालों में तो त्यौहार, पार्टी के आयोजन की तरह हो गये हैं। इन हालातों में इन त्यौहारों का मर्म समझना बहुत जरूरी है। तभी इनमें निहित जीवन-संदेश पुनः लौटकर आयेंगे अन्यथा ये पर्व बेअसर होते जायेंगे।

रक्षाबधंन के मर्मबोध की आवश्यकता

जैसा कि माना जाता है कि राखी बंधवाते समय भाई, बहन को उसकी रक्षा करने का वचन देता है। यहाँ भी, देखा जाये तो वास्तविक मर्मबोध के बिना अनजाने में एक बहुत कमजोर मानसिकता का संदेश समाज में व्याप्त हो गया है कि बहनें व नारी अपनी सुरक्षा के लिये पुरुष वर्ग पर निर्भर हैं। अपने सम्मान की सुरक्षा, हर एक का मूलभूत अधिकार है। इसके लिये जीवनपर्यंत दूसरों पर आश्रित रहना, यह तो सम्मानरहित लाचारी और दुर्बलतापूर्ण स्थिति का संदेश है। इस मानसिकता से ग्रसित नारी वर्ग के लिये यह सोच पाना भी कठिन हो जाता है कि वह भी साहसी हो सकती है और उसका सम्मान पाने का यह अधिकार पुरुष वर्ग के अनुग्रह के आश्रित नहीं है।

परम्परा, शक्ति जगाने के लिये बनाई जाती है, कमजोर बनाने के लिये नहीं

सोचने की बात है कि विश्व की अन्य धर्म-संस्कृतियाँ, जिनमें राखी का चलन नहीं है, क्या उनमें भाई अपनी बहन की रक्षा नहीं करते? भाई-बहन, माता-पिता व पुत्र आदि निकट सम्बंधी संकट के समय एक-दूसरे की रक्षा व सहयोग करें, यह तो स्वाभाविक प्रेम है, मात्र इस प्रयोजन के लिये राखी बांधना सार्थक प्रतीत नहीं होता। इससे अनजाने में एक कन्या मनोवैज्ञानिक तौर पर बालपन से ही अपने को निर्बल एवं पराश्रित होना स्वीकार कर लेती है कि एक कुपुरुष से रक्षा के लिये दूसरे सद्पुरुष की आवश्यकता है। वह स्वयं की सुरक्षा में इतनी सक्षम व आत्मनिर्भर है ही नहीं। सारा जीवन उसे पिता, भ्राता, पति व पुत्र की सुरक्षा में ही बिताना है तो फिर उसका निजी आत्मबल व साहस जगे कैसे? कोई भी परम्परा शक्ति जगाने के लिये बनाई जाती है, कमजोर बनाने के लिये नहीं। तो यहाँ राखी बांधने की परम्परा पर प्रश्नचिन्ह नहीं है बल्कि उसका अभिप्राय, जो हम समझते

रहे हैं, उस पर विचार करने की आवश्यकता है।

त्यौहार का उद्देश्य – आत्मा में निहित सद्‌गुणों एवं सद्‌भावों की स्मृति को जागृत करना

वर्तमान परिदृश्य में, रक्षाबंधन पर्व का अर्थ भाइयों द्वारा बहनों की केवल शारीरिक सुरक्षा से जोड़कर बहुत सीमित मान लिया गया है। इसमें विकारों से रक्षा करके आत्मा के सम्पूर्ण अस्तित्व को दुख व पतन से सुरक्षित करने की कोई चर्चा नहीं होती है। इससे तो रक्षाबंधन मात्र सुरक्षा बंधन बनकर रह गया है। आवश्यकता है रक्षा के सही भावार्थ को समझने की।

भाई, बहन की शारीरिक रक्षा करे, मात्र इस प्रयोजन से राखी बांधने की प्रथा शुरू नहीं हुई है। इसका मूल उद्देश्य मानव आत्मा में निहित सद्‌गुणों एवं सद्‌भावों की स्मृति को जागृत करना रहा है। आत्मा की महानता पर सबसे बड़ा दाग कुदृष्टि एवं काम विकार है। यही मनुष्य को अति स्वार्थी, निर्लज्ज, मर्यादाहीन और भोगी बनाता है। आत्मा के श्रेष्ठ गुणों की अनुभूति से इस मनोविकार को दूर किया जा सकता है। जब एक पवित्र कन्या या बहन, भाई की कलाई पर राखी को बांधती है तो वह उसे संदेश देती है कि हे भाई, हमें पवित्रता की दृष्टि-वृत्ति की प्रतिज्ञा करके पापों व विकारों से मुक्त जीवन जीना है। इसी से हमारा जीवन सदा के लिये पतन एवं दु:खों से सुरक्षित हो जाएगा। विश्व के सर्व भाई-बहनों को अपनी मर्यादा एवं शालीनता का बोध रहे तथा वे नैतिकतापूर्ण जीवन जीयें, इन प्रेरणाओं को जीवित बनाये रखने के लिये ही इस पर्व व परम्परा की नींव रखी गई थी।

अब वर्तमान पुरुषोत्तम संगम युग पर स्वयं निराकार परमपिता परमात्मा शिव, पवित्र ब्रह्माकुमारी बहनों द्वारा सभी को स्वधर्म की स्मृति की राखी बंधवा रहे हैं जिससे सभी पवित्रता के स्वधर्म में बंधकर विषय-वासनाओं एवं कुकर्मों के बंधनों से जन्म-जन्मांतरों के लिये मुक्त हो जाएँ। तो आइये, हम परमात्मा पिता की पवित्रता की राखी को बांधकर सदा के लिये सुरक्षित हो जायें। ■■■

आज है रक्षाबन्धन

■■■ ब्रह्माकुमार राजेन्द्र, एटा (उ.प्र.)

आज है रक्षाबंधन, बहना आज है रक्षाबंधन।
आज है रक्षाबंधन, बहना आज है रक्षाबंधन।।

घर-घर में छाई खुशहाली,
खेत-खेत छाई हरियाली,
हवा झुलावे बैठे डाली,
पक्षी करते क्रन्दन।

आज है रक्षाबंधन, बहना आज है रक्षाबंधन।।

मनभावन सावन में राखी,
दिव्यगुणों वाली है राखी,
आत्मा के सम्मान में राखी,
माथे रोली-चंदन।

आज है रक्षाबंधन, बहना आज है रक्षाबंधन।।

माता है सम्मान में आगे,
सीताराम में सीता आगे,
राधेश्याम में राधे आगे,
और लक्ष्मी वन्दन-वन्दन।

आज है रक्षाबंधन, बहना आज है रक्षाबंधन।।

बहनों को निर्भीक किया था,
रक्षा का स्वयं व्रत लिया था,
प्यारे ब्रह्मा बाबा का हम सब
करें आज अभिनन्दन।

आज है रक्षाबंधन, बहना आज है रक्षाबंधन।।

प्रकाशमणि दादी जी की प्रकाशमय बातें

■■■ ब्रह्माकुमार देवेन्द्रनारायण पटेल, मुलुंड, मुंबई

दादी प्रकाशमणि जी का ऊर्जा और गतिशीलता से भरपूर संवेदनशील व्यक्तित्व था। उनके चेहरे पर सदा मुस्कान खेलती रहती थी। उनकी आत्मीयता, मानवीयता, प्रत्येक मानव आत्मा में व्यक्तिगत दिलचस्पी तथा प्रत्येक के हितों का ध्यान रखने की वृत्ति ने उन्हें एक महामानव बना दिया था।

रचा नया इतिहास

एक बार शान्तिवन में राष्ट्रीय धर्म सम्मेलन रखा गया था। देशभर से अनेक महामंडलेश्वर, साधू-संत, महात्मा इसमें पधारे थे। कहा जाता है, दो चोर साथ मिलकर चोरी करने जा सकते हैं किन्तु दो विद्वान एक साथ प्रवचन करने नहीं जा सकते। अनेक धुरंधर संत-महात्माओं को एक मंच पर, एक साथ, एक ही समय पर एकत्रित करके दादी जी ने नया इतिहास रच दिया था। एक संत, दूसरे संत के पीछे बैठने को तैयार नहीं होता है। दादी जी ने बड़ा मंच तैयार कराके मुख्य-मुख्य को एक ही पंक्ति में बिठाकर सभी को सम्मान दिया था।

जगतमाता का अहसास

कार्यक्रम का क्रम प्रात: दस बजे प्रारंभ हुआ। एक-एक संत के भाषण करते-करते दोपहर के दो बज गये। दादी जी का नम्बर आखिर में आया। दादी जी सभा की अध्यक्षा थी। उन्होंने इतना ही कहकर, "आप बहुत समय से यहाँ बैठे हो, दो बज गये हैं, सभी को भूख लगी होगी, अच्छा ओमशान्ति" अपने शब्दों को विराम दे दिया। सभी ने खूब जोर से तालियाँ बजाईं। तमाम प्रतिनिधि, बोलते नजर आये कि दादी जी सचमुच सबकी माँ हैं। दादी जी संस्था की मुखिया थी, चाहे जितना बोल सकती थी लेकिन नहीं बोली। एक बच्चे की भूख, माँ ही समझ सकती है। दादी जी ने सबको जगतमाता का अहसास करा दिया!

सर्व का मान रखने वाली

मुंबई (मुलुंड) में हमारे लौकिक घर का उद्घाटन बड़ी दीदी मनमोहिनी ने किया। उस समय दादी जी किसी कारणवश नहीं आ पाई थी। दादी जी ने कहा, बाद में मैं जरूर पधारूँगी।अपने शब्दों को साकार करते हुए दादी जी हमारे घर पधारे। करीबन डेढ़ घण्टा दादी जी बैठे। जब वे वापस जाने लगे तो मैंने कहा, दादी जी, साइड वाले कमरे में भी चलो ना। उनके साथ आए हुए सभी महारथी बहन-भाई कहने लगे, दादी जी, बहुत समय हो चुका है, अब प्रस्थान करना चाहिए। तब दादी जी ने मुझसे पूछा, वहाँ क्या है? मैंने कहा, दादी जी एक मिनिट उस कमरे में चलो ना। दादी जी तुरंत कमरे में आये, वहाँ कुछ था नहीं, मैंने वहाँ पर "ब्रह्माकुमारी विश्व विद्यालय की विश्व अध्यक्षा दादी प्रकाशमणि जी का हार्दिक स्वागत है" ऐसा बैनर दीवार पर लगाया था। उसके आगे खड़े रहकर दादी जी के साथ फोटो खिंचवाया। तब तो मैं छोटा था। दसवीं की परीक्षा दी थी, तो भी इतनी बड़ी हस्ती ने मेरा मान रखा, मैं गद्गद् हो गया।

अचल-अडोल-स्थितप्रज्ञ

एक बार राजस्थान के किसी शहर में एक भव्य सभागार में कार्यक्रम रखा गया था। मंच पर अनेक गणमान्य प्रतिष्ठित महानुभाव बैठे थे। दादी जी जिस कुर्सी पर विराजमान थी, ठीक उसी के ऊपर लाइट का एक बड़ा झूमर लगा हुआ था। कार्यक्रम जारी था। उसी वक्त अचानक झूमर दादी जी के घुटनों पर गिर गया। सभी आयोजक तनाव में आ गये, कहने लगे, अरे हमने दादी जी को यहाँ बुलाया और दादी जी को यह क्या हो गया? अब क्या होगा? उस वक्त दादी जी ने जो शब्द उच्चारे, वे पूरी दुनिया को आश्चर्यचकित करने जैसे हैं। दादी जी ने बड़े प्यार से, जैसे कि कुछ भी हुआ ही नहीं है, ऐसी अचल-अडोल, स्थितप्रज्ञ स्थिति में कहा, "हाँ...हाँ...दादी जी ने जरूर कभी किसी की टांग तोड़ी होगी, इसलिए तो दादी को तकलीफ हुई है। कोई बात नहीं, शिव बाबा जल्दी ही सबकुछ ठीक कर देगा।" दादी जी ने उपस्थित सभी लोगों को निश्चिंत तथा हलका कर दिया।

नष्टोमोहा स्मृतिर्लब्धा

दादी जी नष्टोमोहा स्मृतिर्लब्धा की साक्षात मूर्ति थीं। दादी जी की सगी लौकिक बहन पांडव भवन में रहती थी। कोई विशेष खातरी नहीं, कोई विशेष सुविधा नहीं। जैसे सब रहते हैं, वैसे वह भी रहती थी। ऐसी सम-दृष्टि, समभावना दादी जी में थी। कोई भी पद अथवा स्तर उन्हें जनसाधारण से विलग नहीं कर सकता था। दूसरों की व्यक्तिगत समस्याओं में हाथ बँटाने वाली, मनुष्य मात्र के प्रति पूर्णतया समर्पित, पृथ्वी पालनहारी दादी जी को हम दिल से श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं। ■■■

निंदक या शिक्षक?

■■■ बी.के.विनायक, सोलार प्लान्ट, शान्तिवन

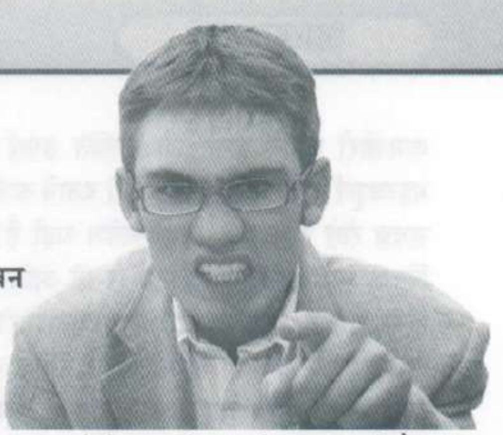

स्नेही की तरफ आकर्षित होना और निंदा करने वालों से दूर रहना, यह मानव का स्वभाव है। डांटने वाले शिक्षक को बच्चे पसंद नहीं करते। निंदा करने वाले पति से पत्नी सम्बन्ध विच्छेद मांगती है। निष्ठुर अधिकारी के साथ कोई काम करना नहीं चाहता। कटु बोलने वाले को अपना मित्र कोई नहीं बनाता। जिसका पड़ोसी निंदक है, वह सदा दुखी रहता है। निंदा एक ऐसा वर्जनीय विषय है जिसका मानव जीवन में कोई स्थान नहीं और निंदक का इस समाज में भी कोई स्थान नहीं। सभी चाहते हैं कि उनकी प्रशंसा हो। कोई कितना भी दुखी क्यों न हो, प्रशंसा सुनते ही मन प्रसन्न होकर मुख खिल जाता है। प्रशंसक का सदा आदर होता है। प्रशंसा करने वाले जीवन साथी मिलें, तो हम जीवन को धन्य समझते हैं। लेकिन लोकोक्ति कहती है, 'निंदा हमारी जो करे मित्र हमारा सो' न कि 'प्रशंसा हमारी जो करे मित्र हमारा सो।' साधना के मार्ग पर साधक को एक खूबसूरत मूर्ति बनाने वाला शिल्पी वास्तव में निंदक है, न कि प्रशंसक।

निंदक के अंदर छिपे शिक्षक को पहचानने के लिए हमें दृष्टिकोण को नकारात्मक से सकारात्मक में बदलना होगा। जिस बात से हम डरते रहते हैं या दुखी रहते हैं, जिस से मुक्ति पाना चाहते हैं वह वस्तु हमारे लिए बहुत ही लाभदायक हो सकती है किन्तु हमें पता नहीं रहता है। पता तब चलता है जब हम उस बात को देखने का दृष्टिकोण बदलते हैं।

एक किसान के खेत में एक भाग ही जमीन थी और तीन भाग तो बड़ी चट्टान फैली हुई थी। किसान इस बात को लेकर बहुत दुखी रहता था क्योंकि घर-परिवार को संभालने के लिए वह जमीन बहुत ही कम थी। एक दिन उसने सोचा, अगर इस चट्टान को तोड़कर रोड़ी और कंकर बनाने दिए जाएँ तो कितनी इमारतें बन सकती हैं! तुरंत ही उसने इमारत बनाने वालों को बुलाकर चट्टान को बेचने की बात की और काम शुरू हो गया। जिस घर में रोटी बननी मुश्किल थी, वहाँ कुछ ही दिनों में सोने-चांदी के गहने दिखने लगे। वही किसान और वही चट्टान, फिर गरीबी बदलकर अमीरी कैसे आ गई? कारण था, दृष्टिकोण! नकारात्मक दृष्टिकोण के कारण जो बेहद समस्या के रूप में दिख रहा था, वही बेहद समाधान बन गया जब उसको सकारात्मक दृष्टिकोण से देखा गया। महापुरुषों की विशेषता यही रही कि जीवन को देखने का उनका दृष्टिकोण अलग ही था। उस दृष्टिकोण द्वारा निंदा, अपमान, विघ्न, समस्या आदि रुकावटों के बजाय सफलता की सीढ़ी उनको नज़र आती रही। इसी विशेषता ने उनको महान बनाया।

अब तीव्र गति से आगे बढ़ने के लिए हमें भी दृष्टिकोण को वास्तविक बनाना है। वास्तविकता यह है कि निंदक सदैव लाभदायक होता है, न कि हानिकारक! निंदक किस प्रकार से हमारा उपकार करता है, यह निम्नलिखित कुछ बातों से स्पष्ट होता है।

नैतिक चिकित्सक

विचार कीजिए, अपनी तबीयत की जांच करानी हो तो हम किस के पास जाएँगे? जो डाक्टर हमारे शरीर में छिपी हुई बीमारियों को अच्छी तरह से खोज करके निकालता है, उसी के पास ही ना? उस डाक्टर को हम बहुत ऊँची नज़र से देखते हैं, उसका शुल्क दुगुना ज्यादा क्यों न हो, देने के लिए तैयार रहते हैं क्योंकि कमजोरी की सही खोज करता है। अब बताइए, शारीरिक

कमजोरी बताने वाला जो व्यक्ति हमारे लिए इतना महत्वपूर्ण है पर नैतिक कमजोरी बताने वाले को निंदक समझ लेते हैं, क्या यह दृष्टिकोण सही है? वास्तव में निंदक तो शारीरिक डाक्टर से भी अधिक महत्वपूर्ण होना चाहिए क्योंकि शारीरिक कमजोरी का प्रभाव केवल शरीर तक ही सीमित है पर नैतिक कमजोरी के साथ हमारे चरित्र का उत्थान व पतन जुड़ा हुआ है। शारीरिक और मानसिक पतन से भी नैतिक पतन कई गुना हानिकारक है जो जीते-जी मृत समान बना देता है। तो अंदर छिपी बुराई की तरफ ध्यान खिंचवा कर हमें जागरूक करने वाले, पतन से बचाने वाले को निंदक समझना, यह एक भ्रम है। वास्तव में वह निंदक नहीं बल्कि नैतिक चिकित्सक है।

चैतन्य दर्पण

अवगुण, मनुष्य का भविष्य उज्ज्वल बनने नहीं देता है। हीरे में एक भी सूक्ष्म दाग रहा तो उसका मूल्य कौड़ी का बन जाता है। वैसे ही हम ज्ञान, गुण या कलाओं से भले ही भरपूर हों पर अंश मात्र अवगुण जो रहा हुआ है, वह हमें सफलता से वंचित कर सकता है। जैसे, खुद का चेहरा खुद को नहीं दिखता, वैसे ही कई बार हमारे अवगुण हमें दिखाई नहीं देते हैं। स्नेह के कारण, मित्र-संबंधी उस अवगुण को देखते हुए भी समा लेते हैं। अन्य सभी भय या संकोच के कारण चुप रह जाते हैं। बीमारी को पहचान कर भी डाक्टर अगर मरीज़ को सावधान नहीं करेगा तो मरीज़ का भविष्य ही शून्य हो जाएगा। हमारे अवगुण के बारे में दूसरों का चुप रह जाना, यह हमारी उन्नति के मार्ग में एक बहुत बड़ी बाधा है। हमारे अवगुण का इशारा हमें किसी ने भी नहीं दिया और समय आने पर उस अवगुण से हमने धोखा खाया तो क्या भविष्य उज्ज्वल होगा? इसलिए, जैसे दर्पण, चेहरे पर लगे दाग दिखाता है, वैसे ही समय-समय पर अवगुण रूपी दाग पर ध्यान खिंचवाने वाला व्यक्ति भी निंदक नहीं बल्कि एक अमूल्य दर्पण है।

पापों से बचाने वाला

मनुष्य गलतियाँ तब करता है जब स्वच्छन्द रहता है या उस पर किसी की निगरानी नहीं रहती है। एक तरफ रंगबिरंगी दुनिया के आकर्षण, दूसरी तरफ स्वेच्छाचारी जीवन, ये दोनों जैसे कि माया का पिंजरा और उसके अंदर रखा चारा है, जो आसानी से अपना शिकार बना लेते हैं। होश तब आता है जब बाहर निकलने का रास्ता ही बंद हो जाता है अर्थात् विकराल रूप के संस्कार से स्वयं को छुड़ाना ही असंभव हो जाता है। इसलिए, हर कदम पर यह सावधानी रखना अति अवश्यक है कि कर्मेंद्रियों से कोई पापकर्म ही न हो। यह सावधानी सहज तब बनी रहती है जब कोई निंदक या हमारी गलतियों को गिनने वाला आस-पास हो। जहाँ सी.सी.टी.वी. कैमरा लगा रहता है वहाँ मनुष्य जागरूक हो जाते हैं और गलती करने से खुद को रोक लेते हैं। वैसे ही, किसी की कड़ी नज़र हम पर है, यह भान हमें अयथार्थ कर्म करने से रोक लेता है। इस बात से हमें थोड़ी-सी सजा का अनुभव जरूर होगा परन्तु यह अल्पकाल की सजा, सदाकाल की सजा से छुड़ा देगी अर्थात् हमारे पुरुषार्थी जीवन को कलंकों से मुक्त रखेगी।

शक्ति को बढ़ाने वाला

शरीर और मन में वातावरण और परिस्थिति के अनुसार प्रतिरोधक शक्ति उत्पन्न होती रहती है। इसलिए ही मिलिटरी, पुलिस, खिलाड़ी आदि लोगों को कई प्रकार के कष्टदायक प्रशिक्षणों से गुजरना पड़ता है ताकि इनकी प्रतिरोधक क्षमता बढ़े जिससे वे ठंडी-गरमी, आक्रमण, प्राकृतिक आपदा आदि का सामना कर सकें। वैसे ही निंदा सुनना, यह भी एक मानसिक प्रशिक्षण है, जो मन को दुख-दर्द के प्रहारों से अभेद्य रखता है। इससे नाजुकपना, झट से भावुक हो जाना आदि समाप्त हो कर गंभीरता और प्रौढ़ता विकसित होती जाती है जो वास्तविकता को पहचानने में सशक्त बनाती हैं। निंदक से हमें दो महान शक्तियाँ उपहार के रूप में मिलती हैं; एक, सहनशक्ति और दूसरी, समाने की शक्ति जो कैसी भी कठिन परिस्थिति में धैर्यवत् बनाती हैं।

वैरागवृत्ति का जनक

वैरागवृत्ति चरित्र निर्माण की साधना में एक बहुत ही उन्नत योग्यता है। महात्मा बुद्ध, संत तुलसीदास, ऋषि भतृहरि, सम्राट अशोक, महर्षि अरविंद घोष आदि जन्मते ही महापुरुष नहीं थे। पर जब इनके अंदर वैरागवृत्ति जागृत हुई तब से इनके चरित्र का निर्माण आरंभ हुआ और वह चरित्र मानवकुल के लिए आदर्श बना। वैराग इनके अंदर अपने आप जागृत नहीं हुआ। महात्मा बुद्ध का हृदय दुख भरे दृश्य देख विदिरण हुआ, तुलसीदास और भतृहरि को पत्नियों से अपमानित होना पड़ा, अशोक को लाखों लाशों के बीच बैठकर रोना पड़ा, अरविंद घोष को कारावास झेलना पड़ा। औरों की निंदा या नफरत जो हमारे प्रति है, उसका अहसास अंदर ही अंदर हममें वैरागवृत्ति को जागृत करता है। अकेले आए थे और अकेले ही जाना है, इस परमसत्य का दर्शन कराने वाला दार्शनिक है निंदक।

परमात्मा समान बनने का अवसर प्रदान करने वाला

ईश्वरीय ज्ञान का अंतिम लक्ष्य है, ज्ञान-गुण और शक्तियों में परमात्मा के समान बनना। परन्तु, शिवपिता ने एक शर्त यह रखी है कि जो साधक अपकारियों पर भी उपकार करने का प्रत्यक्ष प्रमाण दिखाता है, वही उनके समान बन सकता है। अगर हम चाहते हैं कि सभी हमें सम्मान दें, कोई हमारी निंदा न करे, अपकार न करे, तो हमें अपकारी पर उपकार करने का अवसर कैसे मिलेगा? इस शर्त को हम पूर्ण कैसे करेंगे? अगर परीक्षा ही नहीं हुई तो उत्तीर्ण कैसे होंगे?

निंदक, क्या सचमुच ही निंदक है?

हमने किसी बैंक से कर्जा उठाया और चुक्ता नहीं किया। एक दिन अगर बैंक का अधिकारी नोटिस लेकर घर पर आकर बैठ जाए तो क्या हम उसको निंदक कहेंगे? नहीं। यह स्पष्ट है कि नोटिस देने वाला अधिकारी दोषी नहीं बल्कि कर्जा न चुकाने वाला मैं दोषी हूँ। वैसे ही सृष्टिनाटक में यह नियम बना हुआ है कि हर पापकर्म का हिसाब चुक्ता करना ही होगा। तीन प्रकार से वह चुक्ता होता है। सहज राजयोग द्वारा शिवपिता को यथार्थ रीति से याद करने से, शारीरिक और मानसिक पीड़ाओं को भोगने से और निंदा व नफरत का शिकार बनने से। ज्ञान के चक्षु या तीसरे नेत्र से जब हम देखते हैं तो इस बात का पता चलता है कि वह व्यक्ति वास्तव में निंदक नहीं बल्कि हमारे ही पाप का कर्जा उतारने के लिए इस नाटक में निमित्त बना हुआ एक अभिनेता है।

निंदक को सबक सिखाना चाहिए या नहीं?

कहा जाता है, आग्नेयास्त्र को निष्क्रिय करने के लिए वरुणास्त्र का प्रयोग किया जाता है। अगर दोनों तरफ से आग्नेयास्त्र का ही प्रयोग होता है तो वह जलती हुई अग्नि कई गुना बढ़कर हानिकारक हो जाती है। कोई निंदा कर रहा है तो उसका मुँह बंद करने के लिए या उसको सबक सिखाने के लिए सामने वाला भी निंदा करनी शुरू कर देता है। दोनों के वाद-प्रतिवाद से वातावरण तनावयुक्त होकर शारीरिक, मानसिक, प्राकृतिक हानि का कारण बन जाता है। हर पल हमें यह याद रहे कि जैसे अग्नि से अग्नि का शमन नहीं कर सकते वैसे ही विरोध को विरोध से कभी भी जीत नहीं सकते। शान्ति, क्षमा और प्रेम, ये हैं विरोध पर विजय प्राप्त कराने वाले सच्चे अस्त्र।

क्या निंदक से किनारा कर देना सही है?

अगर कोई क्रोध में आकर बात कर रहा है तो वातावरण को शांत रखने हेतु थोड़ी देर वहाँ से किनारा करना अलग बात है परन्तु निंदक के कारण साधना के मार्ग से ही हट जाना या उस व्यक्ति को हटा देना, यह अयथार्थ है। बताइए, मुनि विश्वामित्र से तंग होकर राजा हरिश्चंद्र अगर विश्वामित्र को अपने रास्ते से हटा देता या खुद ही हट जाता तो क्या वह सत्यवादी हरिश्चंद्र के नाम से आज जन-जन के हृदय पर राज्य कर सकता था? विश्वामित्र की कठोरता तो चरम सीमा पर थी लेकिन राजा हरिश्चंद्र ने उस कठोरता को अपनी सत्यता की शक्ति को बढ़ाने के एक साधन के रूप में स्वीकार

किया। उस सकारात्मक दृष्टिकोण से ही वह सत्यवादी कहला कर प्रसिद्ध हुआ।

शिवपिता कहते हैं, अल्पकाल की जीत में बहुत काल की हार समायी हुई है और अल्पकाल की हार में बहुत काल की जीत समायी हुई है। निंदक को अपने मार्ग से हटा देने से अल्पकाल की जीत अर्थात् आसुरी आनंद तो होगा लेकिन साथ-साथ सदाकाल के लिए हार माननी पड़ेगी और सहनशीलता, प्रेम, क्षमा के प्रयोग द्वारा प्रेम के सागर शिवपिता को प्रत्यक्ष करने के लिए मिले उस सुअवसर को सदाकाल के लिए खोना पड़ेगा। हर कदम पर कड़ुवाहट को समाते हुए चलना, यही मधुरता को विकसित करने की विधि है। मधुरता ही प्रत्यक्षता की चाबी है। वास्तव में भाग्यशाली वह है जो सदा निंदकों से घिरा हुआ है क्योंकि सहनशक्ति, समाने की शक्ति, प्रेम, क्षमा जैसे अमूल्य गुण और शक्तियों को अपने मन में फूलों की तरह खिलने का सुंदर अनुभव वही कर सकता है। इन गुण-शक्तियों का महादान करते हुए वह शिवपिता को प्रत्यक्ष कर सकता है। इसलिए हम पहले अपने दृष्टिकोण को सही करें। जैसे, साबुत अनाज, कच्चे तेल आदि को जैसे हैं वैसे ही खा लेना, यह जानलेवा हो सकता है पर हम उनको कुछ प्रक्रियाओं द्वारा परिवर्तन करके स्वीकार करते हैं ताकि वे शरीर के लिए पोषक बनें। वैसे ही निंदक को उसी दृष्टि से न देख, निंदा को स्व उन्नति का साधन बनाएँ। तब निंदक के स्थान पर वह गुप्त रूप में खड़ा शिक्षक या शिल्पी नज़र आएगा, जो हमें सुंदर और पूज्य बनने में पूर्ण मददगार है। ■■■

श्री कृष्ण जन्माष्टमी

ब्र.कु. निर्विकार नरायण श्रीवास्तव, मिश्रिख तीर्थ, उ.प्र.

दिव्य जन्म है श्रीकृष्णा का, जिसको सभी मनाते हैं।
सतयुग के प्रथम मुहूर्त में वो पावन बनकर आते हैं।।
पूर्व जन्म में प्रजापिता ब्रह्मा तुम ही कहलाये थे।
शिव साकारी रथ लेकर के गीता ज्ञान सुनाये थे।।
नर्कमयी दुनिया थी जानी, स्वर्ग धरा पर लाना था।
वह समय सुहाना संगम का, कल्प बाद फिर आना था।।
उस घड़ी में परमपिता शिव, परमधाम से आते हैं।
दिव्य जन्म है श्रीकृष्णा का.....

परमपिता की आज्ञाओं का, पालन तुमने पूर्ण किया।
कंस-जरासंधी जैसे दुष्टों के व्यभिचार को चूर्ण किया।।
कालीदह जैसी दुनिया में रहकर फिर भी न्यारे थे।
पांच विकारों पर विजयी बन, नाग कालिया मारे थे।।
साधू, ऋषि, गृहस्थ, संन्यासी, महिमा सब मिल गाते हैं।
दिव्य जन्म है श्रीकृष्णा का.....

पवित्र बन कर, योग लगाकर, पहला नंबर प्राप्त किया।
ब्रह्मचर्य को धारण करके, काम को पूर्ण समाप्त किया।।
मनसा, वाचा, कर्म, श्वास, संकल्प स्वप्न में मारा है।
संपूर्ण पवित्रता के प्रतीक में, मोर मुकुट सिर धारा है।।
श्याम से सुंदर बन कर के वह सबके मन को लुभाते हैं।
दिव्य जन्म है श्रीकृष्णा का.....

सोलह कला संपूर्ण बने थे, मर्यादा संपूर्ण थी।
सर्व गुणों में पराकाष्ठा, चमक में जैसे हूरन थी।।
निराकारी, निरहंकारी रह, मन को श्रेष्ठ बनाया था।
निर्विकारिता श्रेष्ठता से सब में भाव जगाया था।
थी सूर्यवंश की झलक अनोखी, झूले में सभी झुलाते हैं।
दिव्य जन्म है श्रीकृष्णा का.....

सर्वगुणों में पूर्ण चंद्रमा, जो भृषभान दुलारी थी।
जिनके साथ में हुआ स्वयंवर, वही बनी महारानी थी।।
बाद स्वयंवर राधा का, श्री लक्ष्मी नाम उच्चारण है।
कृष्ण का नाम बदल करके, कहलाते फिर नारायण हैं।।
मुक्ति हेतु सभी प्रेमी जन, उनकी महिमा गाते हैं।
दिव्य जन्म है श्रीकृष्णा का.....

गतांक से आगे

सुख-शान्ति का आधार सहज राजयोग

■■■ ब्रह्माकुमार नरेश, मुजफ्फरनगर

योग वही लगा सकता है जो पहले 'योगी' बने। योगी अर्थात् लक्ष्य के प्रति गंभीर व संसार के प्रति वैरागी। योगी पुरुषार्थ के खेत में प्रालब्ध की फसल उगाता है। परन्तु योगी तो कोई तब बने जब कलियुगी संसार के दुख-अशान्ति व सारहीनता का उसे अनुभव हो और वह इनसे मुक्त होने के ज्ञान की खोज में हो। यह ज्ञान उसे बताता है कि उसका लक्ष्य क्या है, उस लक्ष्य की प्राप्ति की विधि क्या है, उस विधि का दाता कौन है, वह दाता रहता कहां है, उसकी पहचान क्या है और उससे मिला कैसे जाता है? अब इन सब बातों का ज्ञान कौन दे? कलियुग के अंत में ज्यों ही 'वसुंधरा' (अभी है विषम-धरा) पर 'ज्ञान' अमृत की आवश्यकता होती है, त्योंहि इसका 'दाता' भी अवतरित होता है। खोज करने वाली पतित आत्माओं की भेंट, पावन बनाने वाले परमआत्मा से हो ही जाती है। अशान्ति से त्रस्त मनुष्यों को योग सीखने हेतु भटकता देख, योग सिखाने वाला खुद ही आ जाता है। आज लाखों-करोड़ों व्यक्ति योग से लाभ लेना चाहते हैं परन्तु उनका योग लगता नहीं क्योंकि उन्होंने आत्मज्ञान समझा नहीं है और वे योगी के स्वरूप से अनभिज्ञ हैं। उन्होंने मन को पवित्र, सन्तुलित व अनुशासनबद्ध नहीं किया है। उनका प्रयास तो मन रूपी हाथी को धागे से बांधने जैसा है। योग या याद एक यात्रा है और किसी भी यात्रा की पहले तैयारी की जाती है। बिना तैयारी के कोई ट्रेन में भी यूंही नहीं बैठ जाता। यदि पड़ोसी से मिलने जाना हो, तो भी व्यक्ति सिर पर कंघी घुमाता है व वस्त्रों का अवलोकन करता है। कोई किसी बड़े महापुरुष या मंत्री से मिलने जाता है तो नहा-धो कर, अच्छे कपड़े पहन कर शालीनता के साथ जाता है। यदि मुख्यमंत्री या प्रधानमंत्री से मिलने का मौका मिलने वाला हो तो और भी ज्यादा तैयारी करता है। राजयोगी तो सर्वोच्च सत्ता 'ईश्वर' से मिलने का कार्यक्रम रखता है तो उसकी स्थिति कैसी होनी चाहिए? राजयोग सीखने को उत्सुक व्यक्ति अपने साधारण सांसारिक व अलबेले स्वरूप में रहते योग लगाना चाहते हैं, तो लग न सके।

मलीन मन नहीं होता ईश्वरीय स्मृति में लीन

आज मनुष्यों का मन 'मलीन' हो गया है अत: ईश्वरीय-स्मृति में 'लीन' हो नहीं पाता। 'मैं' (अहंकार) में लीन रहना ही 'मैं-लीनता' या मलीनता है। मन को अश्व भी कहा जाता है। शव यदि 100 प्रतिशत जड़ता है, तो अश्व है उच्च गतिशीलता। मन की शक्तियां अपार हैं, अत: कहावत है कि मन हाथी के समान है। महावत (शिवबाबा) मन को ज्ञान जल से नहला कर साफ करता है और यह हाथी (मन) अपने उपर धूल डाल लेता है। महावत हाथी को नरम 'कुश' (घास) खिलाता है, तो उसकी मनमानी पर 'अंकुश' भी चुभोता है। उसी प्रकार योगेश्वर शिव यदि अभी परमपिता के रूप में बच्चों की 'कुशलता' चाहता है तो समय आने पर विकर्मी-मनुष्यात्माओं के प्रति धर्मराज भी होगा।

आराधना की बजाए राजयोग-साधना

यदि एक सीमित साधन वाला लौकिक पिता अपने बच्चे को बेफिक्र व साधन संपन्न बना सकता है, तो सर्व मनुष्यात्माओं के परमपिता शिव से यदि अटूट संबंध जोड़ लिया जाए तो मनुष्य को क्या प्राप्त नहीं हो सकता! इसमें दो राय नहीं कि विश्व में सर्वाधिक लाभप्रद योग उस पारलौकिक पिता से होता है, जो खुद आ कर बच्चों को अपना परिचय देता है। आत्मा अपने लौकिक पिता के पास आ कर जन्म लेती है जबकि पारलौकिक परमपिता शिव तो खुद मनुष्यात्माओं के पास आकर

युक्ति से उन्हें अलौकिक जन्म दिलाते हैं। एक अनाथ बालक को यदि यह पता चल जाए कि वह अनाथ नहीं बल्कि फलाने व्यक्ति का पुत्र है, तो उसे अपने पिता से मिलने की धुन लग जाती है। आज सबको यह पता है कि ईश्वर या भगवान उनका परमपिता है परन्तु बिरला ही कोई अपने परमपिता से संबंध स्थापित करने की धुन में दिख पड़ता है। वह तो प्रात: श्रद्धा से अपने इष्टदेव के सामने अगरबत्तियां जला कर अपने नीरस जीवन में सुख-शान्ति ढूंढ़ता रहता है। आराधना में याचक या भिखारीपने की मनोवृत्ति उसे न तो ईश्वरीय-बच्चा होने की खुशी देती है, न ईश्वर से योगयुक्त होने देती है और ना ही उसे ईश्वर से ज्ञान-गुण व शक्तियों की असीम आत्मिक सम्पदाएं प्राप्त होने देती है। तो जरूरत 'आराधना' की नहीं बल्कि राजयोग की 'साधना' की है जिससे कोई भी मनुष्य ईश्वर की समीपता व उससे समानता का अनुभव करते हुए आत्मिक-संपन्नता व बचे हुए जीवन में संतुष्टता प्राप्त कर सकता है।

ईश्वर से डरो नहीं, प्रेम करो

एक युवक को यह धुन लग गई कि वह योगी बनेगा। उसने सुन रखा था कि ऋषिकेश के पास पहाड़ियों में एक पहुंचा हुआ वृद्ध महात्मा रहता है जिसे कई सिद्धियां प्राप्त हैं। वह उस महात्मा के पास गया। महात्माजी ने महसूस किया कि इस युवक का मन चंचल है अत: उसने योग सिखाने से पहले यह शर्त रखी कि वे पहले तलवार चलाना सिखायेंगे। युवक ने कहा कि मुझे कहीं युद्ध में तलवारबाजी तो करनी नहीं है जो आप तलवार चलाना सिखायेंगे। जब महात्माजी अपनी बात पर अटल रहे तो युवक को मानना पड़ा। महात्माजी ने उसे एक लकड़ी की तलवार अपनी रक्षा के लिए दी और स्वयं भी लकड़ी की तलवार धारण कर ली। जब भी युवक लापरवाह दिखाई देता, महात्मा सामने से आ कर उस पर वार कर देते और युवक कराह उठता। युवक जब चौकन्ना रहने लगा तो महात्माजी अगल-बगल से दबे पांव आते और उस पर प्रहार कर देते। युवक अब और ज्यादा जागरूक हो कर उनके वार को अपनी तलवार से रोकने लगा। अब महात्माजी दबे पांव पीछे से आकर वार कर देते। युवक और भी ज्यादा चौकन्ना हो गया। अब उसे पीछे से आ रहे महात्मा का भी आभास हो जाता और वह बचाव कर लेता। उसका मन अब व्यर्थ की बातों में भटकने के बजाय केवल महात्मा की उपस्थिति पर एकाग्र रहने लगा। एक दिन युवक ने सोचा कि तलवारबाजी तो दोनों तरफ से होती है, अब एक बार मैं भी तो तलवार चलाऊं। उसके यह सोचते ही दूर बैठे महात्मा ने जोर से कहा, 'नहीं बेटा, ऐसा मत करना, मैं वृद्ध हूं और चोट लगी तो मर जाऊंगा।' युवक ने तलवार फेंक दी और महात्मा के चरण पकड़ लिए। महात्माजी ने कहा कि तेरा मन माया से मुक्त होकर मेरे में भयवश एकाग्र हो गया है, बस इसे शिव में प्रेमवश एकाग्र कर ले, तेरा योगी बनने का लक्ष्य पूरा हो जायेगा। यदि मैं तेरा प्रेम अपने से जोड़ने देता, तो तू ईश्वर को छोड़ मेरे से ही चिपका रहता। तो भय एक विकार होते हुए भी कभी-कभी ईश्वर की तरफ धकेलने का कार्य करता है। घनघोर जंगल से गुजरता हुआ एक नास्तिक भी शेर के भय से ईश्वर को याद करने लगता है। सांसारिक योग का बीज 'भय' है और ईश्वरीय योग का बीज 'प्रेम' है। भय है अपने धन व अपनों से बिछुड़ने की आशंका और प्रेम है ईश्वर से मिलने की आकांक्षा। कई धर्म यह कहते हैं कि 'ईश्वर से डरो' जबकि ईश्वरीय ज्ञान कहता है कि 'ईश्वर से व उसकी रचना से प्रेम करो'।

ईश्वर की स्मृति हृदय का विषय है

निराकार शिव के बारे में मनुष्य कहते हैं कि जो अदृश्य है, बिन्दु है, उसे कैसे याद करें? तो फिर गर्भवती स्त्री अपने अनदेखे शिशु को कैसे याद करती रहती है? एक कन्या अपने अनदेखे भावी पति को कैसे याद करती है? विषम परिस्थितियों से बाहर आने के उपायों की अन्त:प्रेरणा कौन दे देता है? घोर संकट में फंसे एक नास्तिक को भी कैसे ईश्वर की याद आती है? एक नास्तिक किसी संत से तर्क कर रहा था कि ईश्वर तो एक कोरी कल्पना है। संत ने कहा कि तुम खुद ईश्वर को याद किये बिना नहीं रह सकते। तुम एक सप्ताह उसे बिल्कुल याद मत करना और तब मेरे पास आना। वह नास्तिक एक सप्ताह के बाद संत के पास आया और बोला कि

आप ठीक कहते थे। ईश्वर को याद नहीं करने के प्रयास से वह और भी ज्यादा याद आया और अब मैं जीवन में पहली बार हल्का-तनावमुक्त महसूस कर रहा हूं। संत ने कहा कि ईश्वर इतना दयालु है कि उसके अस्तित्व को न स्वीकारने व उसे याद न करने के तुम्हारे प्रयास का भी उसने तुम्हें मीठा फल दिया है। रूस के नेता लेनिन कट्टर नास्तिक थे। फिर भी वे अक्सर ''ईश्वर ने चाहा तो'' कह कर आशा व्यक्त किया करते थे जो कि विरोधात्मक बात थी। ईश्वरीय याद मान्यता (आस्तिक या नास्तिक) का विषय नहीं बल्कि हृदय का विषय है और कोई भी नास्तिक मनुष्य ऐसा नहीं जिसने कभी न कभी ईश्वर को याद न किया हो या संकट में उसकी स्मृति में न टिका हो।

योगी का जीवन है 'बहुजन हिताए, बहुजन सुखाय"

ईश्वर अर्थात् शिव और शिव अर्थात् जो सर्वोच्च-शक्ति है, सनातन है, जो 'काल' की परिधि से भी बाहर है और हमेशा से 'है'। चूंकि शिव परम-कल्याणकारी है, "सर्वजन हिताय, सर्वजन सुखाय" है अत: उससे योगयुक्त मनुष्यात्मा का जीवन भी "बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय" के अनुरूप हो जाता है। चूंकि शिव निराकार व अव्यक्त है, अत: उससे योग कैसे लगायें, यह सवाल खड़ा हो सकता है! इसका समाधान नाम, रूप और गुण, इन तीनों के आपसी संबंध के ज्ञान से होता है। यदि एक का वर्णन करें तो बाकि दो स्वत: स्पष्ट हो जाते हैं। यदि श्रीकृष्ण का नाम लेते हैं तो उसका रूप व उसके गुण स्वत: स्मरण हो आते हैं। उसी प्रकार जब सिर पर मोर-मुकुट, हाथों में मुरली का रूप बताते हैं, तो कृष्ण का नाम व गुण स्मरण हो आते हैं। जब 16 कला सम्पूर्ण, सर्व गुण सम्पन्न, सम्पूर्ण निर्विकारी, देवी-देवताओं में सर्वश्रेष्ठ, इन गुणों का बखान करते हैं तो पुन: श्रीकृष्ण का नाम व रूप सामने आ जाता है। उसी प्रकार यदि कहें चूड़ीदार पजामा, बंद गले का कोट, कोट पर गुलाब का फूल, सिर पर गांधी टोपी, तो जवाहरलाल नेहरूजी के नाम, गुण सामने आ जाते हैं। उसी प्रकार गुणों में सिन्धु, रूप में बिन्दु, सर्व के सद्गति दाता, ज्ञान-गुण व शक्तियों के सागर आदि कहने से 'शिव' का नाम व बिन्दुरूप सामने आ जाता है या शिव नाम कहते ही शिवलिंग का रूप व उनके असंख्य गुण बुद्धि में कौंध जाते हैं।

मनोरंजन है पर खुशी नहीं

वर्तमान में इस धरा पर लगभग 730 करोड़ मनुष्य विहंगम दृश्य पेश कर रहे हैं। यहां भाग-दौड़, हंगामा, माया की चकाचौंध, विकारों का विस्फोट, वैज्ञानिकों की जादूगरी, अपराधियों का दु:साहस, न्यायालयों के मेले, भक्तों की पुकार, राजनेताओं की मौकापरस्ती, रईसों की मौज-मस्ती आदि सब-कुछ चरम पर है। धार्मिक कार्य हो रहे हैं पर धर्म नहीं, सामाजिक सेवा कार्य चल रहे हैं पर नैतिकता नहीं, मनोरंजन के साधन हैं पर खुशी नहीं; संबंध निभाए जा रहे हैं पर त्याग भावना नहीं, शान्ति-सम्मेलन हो रहे हैं पर शान्ति नहीं, साधना हो रही है पर सिद्धि नहीं। ऐसे में 'राजयोग' का अमृत-कलश दे कर परमपिता शिव सृष्टि का पुनरुद्धार कर रहे हैं। राजयोग द्वारा पुनरुद्धार है ब्रह्मा व शिव का कार्य, तत्पश्चात महाविनाश है प्रकृति व ड्रामा का कार्य।

राजयोग और महाविनाश

राजयोग ईश्वर से जुड़ना है तो महाविनाश इस कलियुगी सृष्टि से छूटना है। योग से मनोरोगों व मनोविकारों का विनाश होता है जबकि विनाश के नए व उन्नत साधनों से योग लगा कर विश्व महाविनाश के निकट आता जा रहा है। योग आत्मिक अशुद्धि को मिटाता है तो महाविनाश पांच तत्वों की अशुद्धि को मिटायेगा ताकि पावन आत्माएं शुद्ध प्रकृति में देवी-देवताओं के रूप में प्रत्यक्ष हो सकें। चैतन्य-शाश्वत आत्माओं की देवरूप में प्रत्यक्षता हेतु एवं इस साकार लोक की शुद्धता हेतु, योग और महाविनाश दोनों ही आवश्यक हैं। जो मनुष्य अपनी आत्मिक पहचान का और परमपिता शिव के गुह्य कर्त्तव्यों का अनुभव राजयोग की शिक्षा से कर लेंगे, वे अवश्यंभावी महाविनाश (Inevitable Holocaust) में सुरक्षित रह नई दुनिया 'सतयुग' के अधिकारी बन जायेंगे।

एकै साधे सब सधे, सब साधे सब जाये

कहावत है "एकै साधे सब सधे, सब साधे सब जाये" अर्थात् परिवार, घर, धन, स्वास्थ्य, गुरु, मान-सम्मान आदि सबको साधने में जीवन गुजर जाता है परन्तु हाथ कुछ नहीं लगता। यदि केवल एक 'मन' को साध लिया जाए तो मन 'ईश्वरीय साधना' में सहयोगी बन कर सब कुछ प्राप्त करा सकता है। दूसरी कहावत यह भी है कि ''मन के साधे शिव सधें, सब साधे शिव जाये'' अर्थात् मन यदि साध लिया जाए तो यह बुद्धि के सहयोग से शिव को पहचान लेता है और उसकी साधना में टिक जाता है। चूंकि मनुष्य का मन नहीं सधा हुआ है अत: वह भिन्न-भिन्न देवी-देवताओं को ईश्वर के रूप में साधते हुए मारा-मारा भटकता रहता है। द्वापरयुग से 'मन' को साधने के अथक प्रयास योगियों, ऋषि-मुनियों व विभिन्न साधकों ने किए हैं परन्तु मन को तो एक ऐसा केन्द्रबिन्दु चाहिए जिस पर वह समय-समय पर टिक कर शान्ति व ताजगी प्राप्त करता रहे। यह केन्द्रबिन्दु तो स्वयं निराकारी शिव हैं, जो 'मनमना भव:' का मंत्र देकर मन को अपने निराकारी बिन्दु-स्वरूप में टिकाने का ज्ञान व युक्ति मनुष्यों को देते हैं। जिस प्रकार मधुमक्खी कहीं भी उड़ती रहे, उसे छत्ता व रानी मधुमक्खी हमेशा याद रहते हैं, उसी प्रकार एक राजयोगी को बिन्दु-आत्माओं का छत्ता 'परमधाम' और वहां का रहवासी परमात्मा शिव हमेशा याद रहता है। सधे मन द्वारा आत्मा को 'संपन्न व सम्पूर्ण' बनाने का लक्ष्य और लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु ''राजयोग की पढ़ाई'', इनका ज्ञान तो परमपिता शिव के द्वारा ही मिलता है। आइये, राजयोगी बन कर अपनी आदी-मौलिक, संपन्न व सम्पूर्ण अवस्था को प्राप्त करें। **(समाप्त)**

श्रद्धांजलि

बापदादा और मीठी माँ के हस्तों से पली हुई राज बहन (जालन्धर), जिन्होंने सन् 1952 में ईश्वरीय ज्ञान लिया। दादी चन्द्रमणि जी के अंग-संग रह सन् 1960 में ईश्वरीय सेवाओं के निमित्त समर्पित हो गई। आपने पंजाब (जालन्धर) में रहकर अथक बन अनेकानेक सेवायें की। काफी समय से आपका शरीर साथ नहीं दे रहा था, शरीर की आयु 86 वर्ष थी। 12 जून को आप अपना पुराना शरीर छोड़ बापदादा की गोद में चली गई।

मधुबन (पाण्डव भवन) के वी.आई.पी. डायनिंग में सबको बहुत प्यार से ब्रह्माभोजन खिलाने वाली, सबकी स्नेही गीता बहन (मोहन भाई सिंगल की लौकिक छोटी बहन), जिन्हें कुछ समय से हार्ट की तकलीफ थी। 12 जून को आपको सांस की तकलीफ हुई और थोड़े समय में ही आप अपना पुराना शरीर छोड़ बापदादा की गोद में चली गई। आप सन् 1973 में समर्पित हो गई थी। आपने मधुबन में ही अथक सेवायें करते हुए सबकी दुआयें ली। आपके शरीर की आयु 70 वर्ष थी।

कोलकाता कृष्णानगर (नदिया) की कंचन बहन जो कि 1985 में ज्ञान मिलते ही सेवा में समर्पित हो गई। आपकी आयु अभी 57 वर्ष थी। आपका भी स्वास्थ्य कुछ समय से ठीक नहीं था। आप भी 12 जून को ही अपना पुराना शरीर छोड़ बापदादा की गोद में चली गई।

ऐसी स्नेही, अथक सेवाधारी आत्माओं को पूरा ही दैवी परिवार अपनी स्नेह श्रद्धांजलि अर्पित करता है।

दादी की दृष्टि, बापदादा की दृष्टि महसूस हुई

■■■ डॉ.औदुंबर सदाशिव पावले, एम.बी.बी.एस., टेंभूर्णी (महाराष्ट्र)

दादी प्रकाशमणि जी अनेक विशेषताओं की धनी थीं। उनकी सभी विशेषताओं में से एक विशेषता जो मेरे दिल को पहले-पहले छू गई, वह यह थी कि जब वे पार्टी में आने वाले भाई-बहनों से मिलती तो बड़े प्यार से पूछती, 'सफर ठीक रहा? कोई परेशानी तो नहीं हुई आने में? तबियत ठीक है? यहाँ रहने की व्यवस्था ठीक मिली है? अगर कुछ चाहिए तो मुझे बताओ।' हम दादीजी का अपने प्रति इतना प्यार देखकर गद्‌गद् हो जाते थे।

सरल स्वभाव

दीदी जी द्वारा चलाई गई मुरली, बुद्धि रूपी कम्प्यूटर में एकदम छप जाती थी। मुरली-क्लास के बाद कभी-कभी दादी जी कहती थी, दादी आपसे पूछती है कि आज आप सभी को ब्रह्माभोजन में क्या खिलाऊँ? कोई कुछ जवाब नहीं देता था तो दादी जी छोटी मासूम कुमारी की तरह हावभाव बनाते हुए कहती, अच्छा, मेरे कान में आकर सुनाओ। उनका यह सरल स्वभाव देखते ही बनता था।

कार-सेवा में सहयोग

ओमशान्ति भवन के निर्माण कार्य के दौरान दादी जी मुरली-क्लास के बाद सभी से कहती, 'चलो कार-सेवा करने' और जब हम सभी वह कार्य कर रहे होते तो हैट पहनकर वे स्वयं भी पत्थर उठाने लगती। उन्हें देखकर हमें और भी जोश आ जाता था। दो नवम्बर, 1986 को मेरे लौकिक जन्मदिन के समय हम मधुबन में थे। मेरी युगल के माध्यम से यह जानकारी दादी जी तक पहुँची। जब हम सभी पार्टी वाले हिस्ट्री हाल में दादी जी से मिल रहे थे तब उन्होंने मुझे शाल ओढ़ाई, टोली खिलाई और कहा, 'हैप्पी बर्थ डे डॉक्टर साहब।' वह दृश्य याद करके आज भी बहुत खुशी होती है।

प्यार की लाठी चलाओ

एक बार मैं मेडिकल और पैरा-मेडिकल के 90 लोगों की मीटिंग में मधुबन आया। दादीजी मीटिंग की अध्यक्षा थी। उन्होंने कहा, लोगों को योग का इन्जेक्शन लगाओ और व्यसनमुक्ति की गोली खिलाओ। राखी का उत्सव नजदीक था, दादी जी ने बहुत सुंदर राखी मुझे पहनाई, टोली खिलाई और दृष्टि दी। दादी जी की दृष्टि मुझे बापदादा की दृष्टि महसूस हुई। इतनी पावरफुल दृष्टि थी, मुझे देहभान भूल गया। वह दृष्टि मुझे आज भी याद है। ऐसे ही एक बार, एक पुलिस वाला हमारे साथ मधुबन आया था। उसे दादीजी ने कहा था, 'अब प्यार की लाठी चलाओ।'

ऐसे आदर्श बनो जो दूसरे आपके फोटो लें

पाण्डव भवन के आंगन में एक बार दादी प्रकाशमणि जी, दादी गुलजार जी, दादी जानकी जी बैठे हुए थे। उन्हें देख कर मेरे छोटे बच्चे ने कहा कि चलो दादियों के साथ फोटो खिंचवाएँगे। फोटो खिंची जाने के बाद दादी जी ने कहा, 'बच्चे, ऐसे आदर्श बनो जो दूसरे आपके फोटो निकालें।' तब से मेरा फोटो खींचने या खिंचवाने का आकर्षण खत्म हो गया। विदाई के समय दादी जी गो सून, कम सून की टोली का पैकेट देती थी जिसमें काजू, बादाम, सूखी खजूर, किशमिश, लौंग तथा मिश्री होती थी। दादी जी इतनी प्यार भरी दृष्टि देती थी कि हम भाव-विभोर हो जाते थे, आँखों में आँसू आ जाते थे और जाने का दिल ही नहीं करता था।

मातृ-वात्सल्य की धनी दादी जी, यज्ञ की प्रमुख होते हुए थी बहुत निर्माण, नम्रचित्त और सरल-स्वभाव की थी। दादी जी ने सदा ही माँ जैसी पालना दी, प्यार-दुलार दिया। पिता जैसा अधिकार दिया और टीचर बन पढ़ाई पढ़ाई। ऐसी डॉ.प्रकाशमणि दादी जी को दिल से शत-शत नम। ■■■

1.गुरुग्राम (सेक्टर-5)- अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस कार्यक्रम के बाद ब्र.कु.उर्मिला बहन, ब्र.कु.अंजलि बहन तथा प्रतिभागीगण ईश्वरीय स्मृति में। **2.ऋषिकेश**- राजयोग द्वारा शान्ति की अनुभूति कार्यक्रम का उद्घाटन करते हुए मेयर बहन अनीता मामगाई, नगरपालिकाध्यक्ष भ्राता रोशन रातुरी, ब्र.कु.आरती बहन तथा अन्य। **3.दिल्ली (पीतमपुरा)**- बाल व्यक्तित्व विकास शिविर के बाद ब्र.कु.कनिका बहन, ब्र.कु.प्रभा बहन, स्कूल निदेशक भ्राता भाटिया जी, शिविरार्थी बच्चे, माता-पिता तथा अन्य ईश्वरीय स्मृति में। **4.नई दिल्ली (साकेत)**- रोड सेफ्टी कार्यक्रम के बाद ईश्वरीय स्मृति में हैं ब्र.कु.नीरू बहन, ब्र.कु.ज्योति बहन, आई.ए.एस.भ्राता सुरेन्द्र कुमार तथा अन्य। **5.रुड़की**- 'मेरा भारत स्वर्णिम भारत' अभियान कार्यक्रम का उद्घाटन करते हुए राष्ट्रीय साहित्य अकादमी के पूर्व सदस्य डॉ.योगेन्द्र नाथ शर्मा अरुण, ब्र.कु.विमला बहन, ब्र.कु.अस्मिता बहन तथा ब्र.कु.मीना बहन। **6.रामपुर**- अखिल भारतीय प्रदर्शनी बस अभियान कार्यक्रम का उद्घाटन करते हुए राष्ट्रीय व्यापार मंडल प्रतिनिधि अध्यक्ष भ्राता संदीप अग्रवाल, जिला व्यापार मंडल अध्यक्ष भ्राता वेदप्रकाश गोयल, डॉ.कुलदीप चौहान, अभियान यात्री, ब्र.कु.पार्वती बहन, ब्र.कु.संगीता बहन तथा अन्य। **7.मुरादाबाद**- अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस कार्यक्रम में सम्बोधित करते हुए पूर्व कमिश्नर भ्राता सीताराम मीणा जी। मंचासीन हैं ब्र.कु.आशा बहन तथा अन्य। **8.शमसाबाद (आगरा)**- अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस कार्यक्रम का शुभारम्भ करते हुए योगाचार्य ब्र.कु.बाबूलाल भाई, पतंजलि योगपीठ की जिला मंत्री बहन विनिता उपाध्याय, ब्र.कु.शीला बहन, ब्र.कु.अश्विना बहन तथा ब्र.कु.लक्ष्मी बहन।

1.दिल्ली (नांगलोई)- अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस कार्यक्रम का उद्घाटन करते हुए अध्यक्ष भ्राता विनय रावत, विधायक भ्राता सुखबीर सिंह दलाल, डॉ.युधिष्ठिर जी, आचार्य भ्राता गोपाल कृष्ण, डॉक्टर्स, योग शिक्षक, ब्र.कु.आदेश बहन, ब्र.कु.कोकिला बहन तथा अन्य। **2.बहादुरगढ़**- अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस पर ब्र.कु.अंजलि बहन को सम्मानित करते हुए विधायक भ्राता नरेश कौशिक। **3.दिल्ली (मौजपुर)**- राजयोग केन्द्र के लिए बनाए गए सरकारी बोर्ड के उद्घाटन अवसर पर समूह चित्र में हैं विधायक हाजी इशराक खान, ब्र.कु.मणि बहन, ब्र.कु.हीना बहन तथा अन्य। **4.बरेली (चौपुला रोड)**- 'मेरा भारत स्वर्णिम भारत' अभियान कार्यक्रम का उद्घाटन करते हुए अतिरिक्त पुलिस महानिदेशक भ्राता अविनाश चंद्र, कमाण्डेन्ट पी.ए.सी.भ्राता विकास, डॉ.सतेन्द्र जी, अध्यक्ष भारतीय चिकित्सा संघ, ब्र.कु.पार्वती बहन तथा ब्र.कु.नीता बहन। **5.हाथरस (आनन्दपुरी)**- विश्व पत्रकारिता स्वतन्त्रता दिवस कार्यक्रम का शुभारम्भ करते हुए जिलाधिकारी भ्राता प्रवीण कुमार लक्षकार, मंगलायतन विश्वविद्यालय के रजिस्ट्रार प्रोफेसर भ्राता शिवाजी सरकार, ब्र.कु.शान्ता बहन तथा ब्र.कु.सुशान्त भाई। **6.आगरा (ईदगाह)**- विश्व तंबाकू निषेध दिवस पर आयोजित व्यसनमुक्ति प्रदर्शनी का उद्घाटन करते हुए स्टेशन निदेशक भ्राता राजेन्द्र कुमार, डी.पी.ओ.भ्राता अनिल छापोलिया, भ्राता मुकेश कुलश्रेष्ठ, एस.पी.विजिलेंस बहन बबिता साहू, ब्र.कु.अश्विना बहन तथा अन्य। **7.बहजोई (डिबाई)**- सेवाकेन्द्र के प्रथम वार्षिकोत्सव का उद्घाटन करते हुए जिलाधिकारी भ्राता अविनाश कृष्णसिंह, समाजसेवक भ्राता अरविंद वार्ष्णेय, ब्र.कु.कुसुम बहन, ब्र.कु.अलका बहन तथा अन्य। **8.गुरुग्राम (पालम विहार)**- अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस कार्यक्रम का उद्घाटन करते हुए मनोचिकित्सक डॉ.अवधेश शर्मा, डी.आर.डी.ओ.के पूर्व वैज्ञानिक भ्राता दिलीप श्रीवास्तव, ब्र.कु.उर्मिल बहन, ब्र.कु.सुदेश बहन तथा बहन उर्मिल वर्मा।

यशदायिनी दादी प्रकाशमणि

ब्रह्माकुमार हेमंत, शांतिवन (आबूरोड)

अमावस की काली रात में अंधेरे का साम्राज्य व आंधी-तूफान का मंजर हो तो सिर पर भय का भूत सवार होगा ही, तब कोई पथिक एक कदम भी आगे कैसे बढ़ाये? किन्तु, कोई चमत्कार हो एवं कोई दिव्यमणि मिले, तो उसके प्रकाश में भटका राही मंजिल पा सकता है। उस दिव्य प्रकाश से पतित व पददलित मुक्ति पा सकते हैं। ऐसी ही एक अद्भुत, अलौकिक एवं अनमोल मणि थी डॉ. दादी प्रकाशमणि।

यथा नाम तथा काम

दादीजी के उज्ज्वल रूप व कर्तव्यनिष्ठ स्वरूप को देख स्वयं शिवपिता ने दादीजी को प्रकाशमणि नाम दिया। 'यथा नाम तथा काम' की उक्ति के अनुरूप उन्होंने स्वयं के अथक पुरुषार्थ से 'प्रकाशमणि' नाम को सार्थक किया। सच्चे अर्थों में वे आध्यात्मिक ज्ञान प्रकाश फैलाने वाली चैतन्य मणि बनी। असंख्य अशांत, दु:खी आत्माओं के लिए अध्यात्म का दीपस्तम्भ बन जीवनपर्यंत उन्हें सुख-चैन का किनारा दिखाया। दादी जी, बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न व्यक्तित्व का अद्भुत मिसाल थी। पिताश्री ब्रह्माबाबा ने अविनाशी रुद्र-ज्ञान यज्ञ का छोटा-सा पौधा सौंपा था, जिसे उन्होंने विशाल वटवृक्ष बना दिया।

नि:स्वार्थ प्यार का समंदर

दादी जी एक ऐसा विराट कल्पवृक्ष थी, जिसकी छाया तले अनगिनत आत्माएं स्नेह का साया पा सकी, जिस पर असंख्य रूहें, रूहानियत का नीड़ बना सकीं, जिसके नीचे अबोध-अनाथ आत्माएँ आत्मीयता का आशियाना पा सकीं। वे स्वार्थ की कड़कती धूप में, नि:स्वार्थ प्यार का समंदर थी। दीन-दु:खी जन के लिए वे धैर्य धारिणी धरती माँ की ममता का बिछौना एवं उदास-निराश मन के लिए आशाओं का अनंत आसमान थी। दादीजी के सानिध्य के

वो परमसुखदाई पल स्मरण होते ही, नैनों के समक्ष प्रकट होता है उनका हिमालय-सा भव्य दिव्य विराट व्यक्तित्व। उनका मातृ स्वरूप भुलाये नहीं भूलता।

स्नेह सौरभ की अविरत वर्षा

मधुबन प्रागंण में कदम पड़े तो उम्र छोटी थी। उन दिनों मातेश्वरी भवन की सम्भाल के साथ-साथ अन्य कई प्रकार की यज्ञ-सेवा का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ था। प्रात: से रात तक दादीजी के स्नेह सौरभ की अविरत वर्षा होती व दादी जी का मातपिता-सा प्यार-दुलार व पालना का उपहार बिन माँगे अनुभव होता रहता। कोई ऐसा दिन न बीतता, जो पीठ पर दादीजी की प्यार भरी थपकी का पुरस्कार न मिलता। दरियादिल दादीजी बालमन की हर मुराद पूरी कर देती थी। बड़े प्यार से दादीजी का मुझ आत्मा को मिचनू-मिचनू कह बुलाना, उनमें मैया यशोदा का दीदार कराता था। न जाने किन जन्मों का पुण्य फलित हुआ था।

खुदा भी फिदा

जब दादीजी को कोई स्वनिर्मित तोहफा या पुष्पगुच्छ देते अथवा खुद चित्रित किया हुआ चित्र दिखाते तो वे कलापारखी, कदरदान बन, स्वयं उसे निहारती, प्रोत्साहित करती व उमंग के पंख दे आनंद के आकाश में उड़ा देती। छोटी-सी कृति देख खुशी से इस कदर फूले न समाती मानो एक मां संतान के हर क्रिया-कलाप पर न्यौछावर हो। मातेश्वरी भवन में दादीजी आती तो चलते-चलते खिड़कियों व शीशों पर उंगली फेर, धूल दिखाकर स्वच्छता पर ध्यान खिंचवाती। ऐसे ही बाल या नाखून बड़े हो जाने पर तुरंत कटवाने को कहती। सेवा के

साथ स्वउन्नति पर भी ध्यान देती। मधुर बोली के संग मीठी टोली खिलाकर तन की तन्दुरुस्ती का भी खयाल रखती। वे मुरली-मंथन से ज्ञान-मक्खन खिलाकर रूहानी पोषण करती। सचमुच दादीजी कदम-कदम में यशदायिनी माँ यशोदा ही तो थी।

उनकी निगाहें हर वक्त आत्मा के आंतरिक सौंदर्य को निहारने में मगन रहती। उनके अधरों पर फैली मधुर मुस्कान ''जिंदगी खुशी का नाम है, फिर गम का क्या काम है'' ये कहते हुए जीने की कला सिखा रही होती। उनका आदर्श आचरण सब को आइना दिखाता। इन नैनों ने, दादीजी के पवित्र प्रेम की हर अदा पर खुदा को भी फिदा होते देखा। सचमुच वे धरा पर प्रेम की साक्षात् देवी थी। उनका आत्मिक प्यार जाति-धर्म की दीवार को ढहाकर हर किसी को अपना बना लेता था।

उनके नैनों से टपकती वात्सल्य की अमृतधारा अंत:करण को अपनत्व से भर देती थी। उनका बालसुमनों के लिए प्यार-दुलार, वरिष्ठजनों के लिए सम्मान का इजहार और आगन्तुकों के लिए अतिथि सत्कार बेमिसाल था। उनके उदार उर व श्रेष्ठ व्यवहार में हर छोटे, बड़े एवं साथियों के लिए क्रमश: स्नेह, सम्मान एवं सहयोग बेशुमार था। अंधकार में भटके जलपोत को दिशा दिखाने वाले दीपस्तंभ सम वो लक्ष्य से भटके मानव के लिए प्रकाश का चैतन्य दीपस्तंभ थी। उस चैतन्य दीपस्तंभ की रूहानी रोशनी की रश्मियाँ रूहों को राहत दे स्वधाम की राह दिखाती थीं।

अनुपम शिल्पकार

वे एक ऐसी करिश्माई पारसमणि थी जिनके स्नेहिल स्पर्श मात्र से पत्थर दिल भी पल में पिघल जाते थे। उनके संवेदनशीलता के जादू से पशुवत इंसान को मानव तथा मानव को देव में बदलते देर न लगती थी। वे एक अनुपम शिल्पकार भी थी। उनके पारखी नैन साधारण व्यक्ति में छिपे गुण विशेष को पलभर में ढूंढ़ लेते थे। उनका कुशल मार्गदर्शन किसी की भी कला को सहजता से तराश देता था। वे हिम्मतहीन में हिम्मत, निर्बल में बल, असमर्थ में सामर्थ्य भर असम्भव को सम्भव करने में सिद्धहस्त थी। ऐसी ममता की मूरत, स्नेह की सूरत दादीजी को उनकी पुण्यतिथि पर शत-शत नमन एवं अथाह स्नेह सुमन अर्पित करता हूँ। ■■■

बँधा ले आजा राखी तू

■■■ ब्रह्माकुमार राजवीर, बड़ौत (उ.प्र.)

भाग्यविधाता जगा रहा कोई किस्मत वाला जागे।
निर्बन्धन शिव बाँध रहा है पावनता के धागे।
बँधा ले आजा राखी तू, सजा ले आजा राखी तू।।

देहभान के रावण ने है कितना हमें रुलाया।
आत्म-ज्ञान दे अमर बनाने अमरनाथ अब आया।
दुनिया के सब रस फीके हैं प्रभु-मिलन के आगे।
बंधा ले आजा राखी तू, सजा ले आजा राखी तू।।

जन्नत की पाकीज़ा रूहें, स्वर्ण महलों में ठिकाना।
कंचन काया, हीरे-मोती, था भरपूर खज़ाना।
खुशियों से जगमग वो दुनिया एक सपना-सा लागे।
बंधा ले आजा राखी तू, सजा ले आजा राखी तू।।

राखी के ये पावन धागे हैं बड़े अद्भुत, अनमोल।
बाबा माँगे कूड़ा-कचरा, मन की गठरी खोल।
बदले में राजाई ले ले, स्वर्ग खड़ा है आगे।
बंधा ले आजा राखी तू, सजा ले आजा राखी तू।।

तुम रखो राखी की लाज़, राखी रखे तुम्हारी।
करो प्रतिज्ञा पवित्रता की, मिट जायें सभी बीमारी।
चूक जायें जो ये अवसर वो बच्चे बड़े अभागे।
बंधा ले आजा राखी तू, सजा ले आजा राखी तू।।

1.गंगोह (सहारनपुर)- सांसद भ्राता प्रदीप चौधरी को ईश्वरीय सौगात देते हुए ब्र.कु.संतोष बहन। **2.फर्रुखाबाद (बीबीगंज)**- पुलिस अधीक्षक डॉ.अनिल कुमार मिश्रा तथा आई.ए.एस.डॉ.राजेन्द्र पैन्सियाँ को ईश्वरीय सौगात देते हुए ब्र.कु.मंजू बहन। **3.आगरा (म्यूजियम)**- अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस पर डी.एम.भ्राता एन.जी.रवि को ईश्वरीय सौगात देते हुए ब्र.कु.शीला बहन। **4.अलीगढ़**- साध्वी ज्ञानवती जी को ईश्वरीय सौगात देते हुए ब्र.कु.कमलेश बहन, ब्र.कु.सत्यप्रकाश भाई तथा अन्य। **5.रूरा**- मल्टी अवार्ड विन्नर समाजसेविका बहन कंचन मिश्रा को ईश्वरीय सौगात देते हुए ब्र.कु.प्रीति बहन। **6.छर्रा**- भारतीय स्टेट बैंक ऑफ इंडिया के प्रबंधक भ्राता भोले शंकर को ईश्वरीय सौगात देते हुए ब्र.कु.रेखा बहन तथा ब्र.कु.दिशा बहन। **7.सीतापुर**- अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस कार्यक्रम के पश्चात् जिलाधिकारी भ्राता अखिलेश को ईश्वरीय सौगात देते हुए ब्र.कु.योगेश्वरी बहन। **8.हल्दवानी-नैनीताल**- अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस कार्यक्रम का उद्घाटन करते हुए ब्र.कु.सती भाई, ब्र.कु.बालाराम तलरेजा, ब्र.कु.नीलम बहन तथा ए.टी.आई. के पूर्व निदेशक भ्राता पी.एस.कुत्याल। **9.चुनार**- पर्यावरण दिवस पर वृक्षारोपण करते हुए डॉ.संतोष कुमार वर्मा, विधायक प्रतिनिधि भ्राता आलोक कुमार सिंह, डॉ.धनेश सिंह, ब्र.कु.कुसुम बहन तथा अन्य। **10.गुरुग्राम**- योग दिवस कार्यक्रम में ईश्वरीय सन्देश देते हुए ब्र.कु.उर्मिला बहन। **11.देहरादून**- अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस कार्यक्रम में मंचासीन हैं ब्र.कु.शालू बहन, डॉ.मनोज श्रीवास्तव, ब्र.कु.मंजू बहन, योगाचार्य भ्राता विपिन जोशी, योगाचार्य भ्राता सुबोध नेगी तथा अन्य। **12.प्रयागराज (कीटगंज)**- अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस कार्यक्रम में ब्र.कु.श्रद्धा बहन तथा ब्र.कु.माधुरी बहन को, एयरफोर्स के मुख्य अभियन्ता भ्राता एम.एम.भाटिया मोमेन्टो प्रदान करते हुए।

1.अजमेर (शास्त्री नगर)- अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस पर चीफ पोस्ट मास्टर जनरल भ्राता रामभरोसे जी तथा उनकी धर्मपत्नी को ईश्वरीय सौगात देते हुए ब्र.कु.आशा बहन, ब्र.कु.रूपा बहन तथा ब्र.कु.रमेश भाई। **2.जयपुर (राजापार्क)**- 'सक्सेस इन बिजनेस थ्रो स्प्रीचुअलिटी' विषयक कार्यक्रम के पश्चात् ईश्वरीय स्मृति में हैं एम.सी.ए.निदेशक भ्राता जयसिंह सेठिया, आई.ए.एस.बहन शकुंतला सिंह, ब्र.कु.पूनम बहन, कमिश्नर डॉ.कृष्णाकांत पाठक तथा अन्य। **3.जयपुर (वापूनगर)**- अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस पर क्षेत्रीय पासपोर्ट सेवाकेन्द्र में योगाभ्यास के पश्चात् समूह चित्र में हैं अधिकारी भ्राता राजेन्द्र सिंह, ब्र.कु.जयन्ती बहन तथा अन्य। **4.भरतपुर**- अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस कार्यक्रम का उद्घाटन करते हुए मेयर भ्राता शिवसिंह भोट, आयुर्वेद विभाग उपनिदेशक भ्राता निरंजन सिंह, एडिशनल एस.पी.डॉ.मूलचंद राणा, ब्र.कु.कविता बहन, ब्र.कु.भावना बहन तथा ब्र.कु.बबीता बहन। **5.वैर (भरतपुर)**- अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस के अवसर पर उपखण्ड अधिकारी भ्राता विशम्बर दयाल शर्मा, विकास अधिकारी भ्राता रामफल शर्मा, तहसीलदार भ्राता रणजीत सिंह आदि को ईश्वरीय साहित्य प्रदान करते हुए ब्र.कु.सन्तोष बहन। **6.जयपुर (सोडाला)**- वैज्ञानिक तथा इंजीनियर प्रभाग द्वारा आयोजित कार्यक्रम का उद्घाटन करते हुए ब्र.कु.स्नेहा बहन, प्राचार्य डॉ.संदीप, चीफ इन्जिनियर भ्राता अनिल गर्ग, ब्र.कु.राखी बहन तथा अन्य। **7.भीनमाल**- अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस पर स्कूल ग्राउन्ड में मेडिटेशन कराते हुए ब्र.कु.गीता बहन। मंचासीन हैं ब्रह्मगुप्त योगसेवा समिति के अध्यक्ष डॉ.श्रवण मोदी और पतंजलि के योग शिक्षक भ्राता जेठाराम। **8.रानी**- विश्व पर्यावरण दिवस पर वृक्षारोपण करते हुए खिमावत ट्रस्ट के प्रोजेक्ट प्रबंधक भ्राता भूपेन्द्र खिमावत, साईंधाम निदेशक भ्राता नवरत्न मेहता, ब्र.कु.सोनू बहन, खेल मंत्रालय के निदेशक भ्राता श्यामसुन्दर तथा अन्य।

इसी वजह से

■■■ मुकेश जैन, नई दिल्ली

उज्जैन नरेश की सवारी निकल रही थी। राजपथ के दोनों ओर भरपूर जन सैलाब था। एक नेत्रहीन फकीर भी अपनी मस्ती में मार्ग के मध्य में चल रहा था। तभी वहाँ राजा के कुछ सैनिक आए और फकीर को धक्का देते हुए चिल्लाए, अबे अंधे, हट यहाँ से! देखता नहीं, राजा की सवारी आ रही है। फकीर हँसते हुए बोला, 'इसी वजह से' और वहीं डटा रहा। कुछ क्षण पश्चात् वहाँ घुड़सवार सैनिक आए और मुनादी करते हुए चीखने लगे, मार्ग खाली करो, राजा की सवारी आ रही है। फकीर फिर से 'इसी वजह से' बोलकर अपनी मस्ती से चलता रहा। तभी राजा के मंत्री भी घोड़ों पर आए और सबसे बचते हुए निकल गए। फकीर ने फिर अपना वाक्य दोहरा दिया। इसी गहमागहमी में राजा की सवारी फकीर के एकदम पास आ गई। राजा रथ से उतरा, फकीर के चरण छूकर कुछ उपहार आदि दिए और आशीर्वाद लिया। फकीर फिर से 'इसी वजह से' कहकर मुस्कराया तो भीड़ ने इसका कारण पूछा। फकीर ने समझाया, इसमें रहस्य जैसा कुछ नहीं है। जो जिस पद पर है, वह अपने आचरण से ही है। सैनिकों ने मुझे धक्के मारे, घुड़सवारों ने चीख-पुकार मचाई, मन्त्री मुझसे बचते हुए निकल गए और राजा ने चरण स्पर्श कर उपहार दिए और आशीर्वाद लिया। जो जैसे आचरण वाला है, उसे वैसा ही पद प्राप्त होता है। आचरण की वजह से कोई राजा है और कोई सैनिक इसीलिए मैं बार-बार चेतावनी दे रहा हूँ कि प्राप्तियों की भिन्नता की वजह आचरण है, आचरण को सुधारो। ■■■

वैश्विक प्रेम के प्रतीक 'रक्षाबंधन पर्व' तथा सतयुगी दुनिया के महाराजकुमार श्रीकृष्ण के जन्मोत्सव 'जन्माष्टमी' पर्व की पाठकगण को कोटि-कोटि बधाइयाँ

सदस्यता शुल्क:

(भारत) वार्षिक: 100 /- आजीवन : 2,000 /-
(विदेश) वार्षिक - 1,000/- आजीवन - 10,000/-

शुल्क ड्राफ्ट या ई-मनीऑर्डर द्वारा भेजने हेतु पता :

'ज्ञानामृत', ज्ञानामृत भवन, शान्तिवन- 307510
(आबू रोड) राजस्थान, भारत।

For Online Subscription: **Bank**: State Bank of India, **A/c Holder Name :** Gyanamrit, **A/c No:** 30297656367
Branch Name : PBKIVV, Shantivan, IFSC Code : SBIN0010638

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क सूत्र :

Mobile: 09414006904, 09414423949, **Email:** hindigyanamrit@gmail.com, omshantipress@bkivv.org

ब्र.कु. आत्मप्रकाश, मुख्य सम्पादक एवं प्रकाशक, ज्ञानामृत भवन, शान्तिवन, आबूरोड द्वारा सम्पादन तथा ओमशान्ति प्रिन्टिंग प्रेस, शान्तिवन-307510, आबूरोड में प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय के लिए छपवाया।
मुख्य सम्पादक - ब्र.कु. आत्मप्रकाश, **सम्पादक** - ब्र.कु. उर्मिला, शान्तिवन

फोटो, लेख, कविता या अन्य प्रकाशन सामग्री के लिये :

E-mail : gyanamritpatrika@bkivv.org, omshantiprintingpress@gmail.com, Website: gyanamrit.bkinfo.in

1.ज्ञानसरोवर (आबू पर्वत)- 'बेहतर प्रशासन के लिए वैचारिक प्रक्रिया का नवीनीकरण' सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए ब्र.कु.आशा बहन, ब्र.कु.बृजमोहन भाई, सेवानिवृत्त आई.ए.एस.भ्राता मीणा जी, डॉ.देवव्रत स्वाई तथा आयुष मंत्रालय में संयुक्त सचिव भ्राता रोशन जग्गी। **2.ज्ञान सरोवर (आबू पर्वत)**- समाज सेवा प्रभाग द्वारा आयोजित 'सुखमय जीवन, स्वस्थ समाज' विषयक सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए राजयोगिनी दादी जानकी जी, नेपाल के पूर्व उप-प्रधानमंत्री भ्राता विजय कुमार गच्छदार, ब्र.कु.राज बहन, ब्र.कु.संतोष बहन, ब्र.कु.अमीरचंद भाई, ब्र.कु.प्रेम सिंह, ब्र.कु.अवतार भाई तथा अन्य। **3.कोटा**- लोकसभा अध्यक्ष भ्राता ओम बिरला जी का शाल ओढ़ाकर सम्मान करने के बाद ईश्वरीय सौगात देते हुए ब्र.कु.उर्मिला बहन। **4.नई दिल्ली**- भाजपा के कार्यकारी अध्यक्ष भ्राता जगत प्रकाश नड्डा ज्ञान-चर्चा के बाद ब्र.कु.आशा बहन तथा ब्र.कु.प्रकाश भाई उनके साथ। **5.काठमाण्डू**- नेपाल के शिक्षा, विज्ञान, तकनीकी मंत्री भ्राता गिरिराज एम. पोखरेल को ईश्वरीय सौगात देते हुए ब्र.कु.कुसुम बहन। **6.बीकानेर**- केन्द्रीय जल संसाधन राज्यमंत्री भ्राता अर्जुन राम मेघवाल का स्वागत करते हुए ब्र.कु.कमल बहन तथा अन्य बहनें। **7.गुवाहाटी**- आसाम तथा मिजोरम के राज्यपाल महामहिम डॉ.जगदीश मुखी जी को ईश्वरीय निमंत्रण देते हुए ब्र.कु.मौसमी बहन, ब्र.कु.रेखा बहन तथा ब्र.कु.सन्तोष भाई। **8.भरतपुर**- राजस्थान के पर्यटन एवं देवस्थान मंत्री भ्राता विश्वेन्द्र सिंह जी को जन्मदिवस की बधाई देकर ईश्वरीय सौगात, साहित्य एवं गुलदस्ता भेंट करते हुए ब्र.कु.बबिता बहन, ब्र.कु.गीता बहन तथा ब्र.कु.प्रवीणा बहन।

RNI No.10563/1965, Postal Regd. No.RJ/SRO/9559/2018-2020 Posting at Shantivan-307510 (Abu Road) Licensed to post without prepayment No. RJ/WR/WPP/002/2018-2020. Published on 20th of each Month & Posted on 26th to 1st of each month. Price 1 copy Rs. 8.50, Issue : August, 2019.

रक्षा-बन्धन के पावन पर्व पर
दादी जानकी जी का
दिव्य सन्देश

विश्व-रक्षक पिता परमात्मा के ज्ञान, गुण और शक्तियों की छत्रछाया में सदा सुरक्षित रहने वाले सर्व भाई-बहनें,

आप सर्व को पावन रक्षाबंधन तथा जन्माष्टमी की कोटि-कोटि बधाइयाँ।

सृष्टि रंगमंच पर उपस्थित हम सभी आत्माएँ मूल रूप में भाई-भाई हैं, एक पिता की सन्तान हैं, एक घर की रहवासी हैं और हम सबका एक ही धर्म है पवित्रता।

परमात्मा पिता की दिव्य-शिक्षाओं का पालन करते हुए हम मन-वचन-कर्म और स्वप्न में भी पूर्ण पवित्रता को अपनाएँ, यही रक्षाबन्धन का पावन संदेश है।

बुराइयों से सर्व की रक्षा करने वाले, एक की याद द्वारा एकता के सूत्र में पिरोने वाले, उमंग-उत्साह और खुशी की खुराक से निरोगी और दीर्घायु बनाने वाले रक्षा-सूत्र को 'पवित्र भव-योगी भव'. के मंत्र को याद रखते हुए दृढ़ संकल्प से कलाई पर बाँधें।

मधुर बोल की अविनाशी मिठाई एक-दो को खिलाएँ और मस्तक पर आत्म-स्वरूप में टिकने का टीका लगाएँ। पवित्रता, मधुरता और दृढ़ता की यह धारणा आपको सदा खुशनसीब बना देगी।

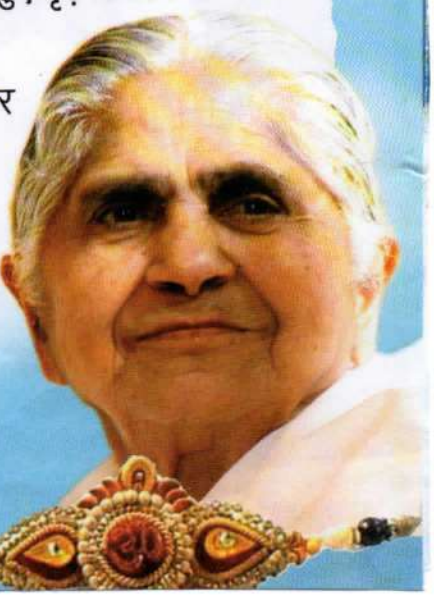

-- दादी जानकी